मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

لَبَّيْكَ اللّٰهُمَّ لَبَّيْكَ، لَبَّيْكَ لَا شَرِيْكَ لَكَ لَبَّيْكَ،

إِنَّ الْحَمْدَ وَالنِّعْمَةَ لَكَ وَالْمُلْكَ، لَا شَرِيْكَ لَكَ

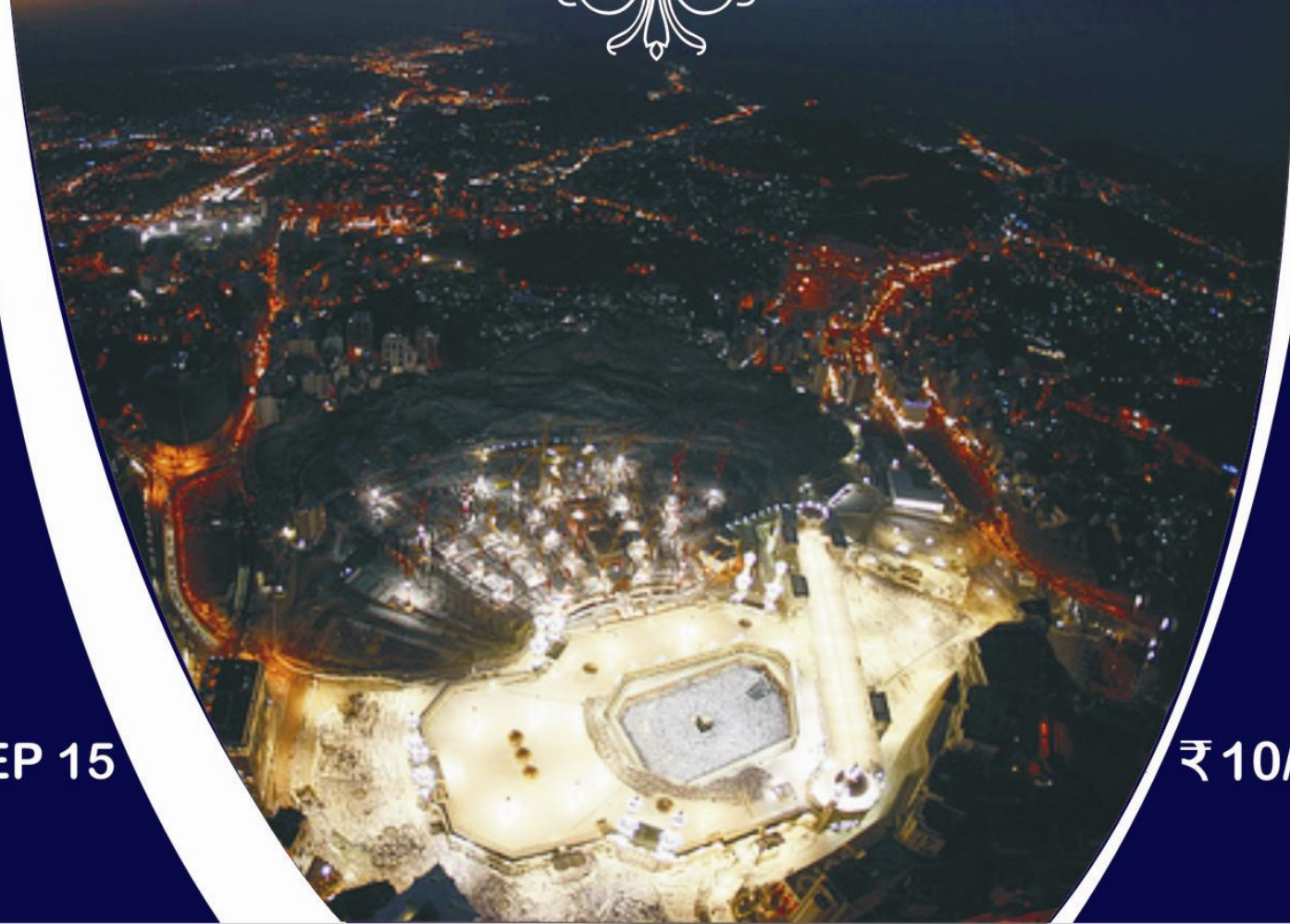

SEP 15

₹10/-

कुर्बानी का महत्व

"और हमने हर उम्मत के लिए कुर्बानी रखी है।"

कुर्बानी का मक़सद और कुर्बानी का दर्जा और कुर्बानी की ज़रूरत और कुर्बानी की शरीअत इस्लामी नहीं बल्कि अल्लाह का क़ानून है। इसलिए कुर्बानी से संबंधित यह बात साबित है कि हर धर्म में कुर्बानी थी। विभिन्न जानवरों के हुक्म थोड़ी–थोड़ी भिन्नताओं के साथ हर ज़माने में थे। लेकिन कुर्बानी सभी धर्मों में समान चीज़ थी। इसको समझ लेना चाहिए। अस्ल चीज़ यह है कि अल्लाह तबारक व तआला पर ईमान लाने और तौहीद के अक़ीदे की यह मांग है और इसकी फितरत में दाख़िल है कि अल्लाह तबारक व तआला के सामने हर चीज़ अल्लाह के ऊपर कुर्बान की जाए। उसको कुर्बान करने का तरीक़ा एक नहीं हो सकता। जैसे किसी इच्छा का कुर्बान करना, वह कोई शरीर रखने वाली चीज़ नहीं है कि उसके गले में छुरी फेरी जाए, औलाद को कुर्बान करना, इसके माने यह नहीं है कि औलाद को ज़िबह कर दिया जाए। इसीलिए हज़रत इब्राहीम अलै०–हज़रत इस्माईल अलै० की घटना की ओर भी इशारा करेंगे। महबूब चीज़ों को कुर्बान करना, मरग़ूब चीज़ों को कुर्बान करना, जाहिलियत की आदत को कुर्बान करना, रस्म व रिवाज को कुर्बान करना, माल व सम्मान की तलब, बड़े बनने के शौक़ को कुर्बान करना, दूसरे के मुक़ाबले में अपनी ज़ात की बड़ाई को हर क़ीमत पर बाक़ी रखने के जज़्बे को कुर्बान करना। यह सब कुर्बानी के अन्तर्गत आता है। लेकिन हर चीज़ की कुर्बानी अलग–अलग होती है। हर चीज़ की कुर्बानी इस तरह नहीं हो सकती है। उनका जिस्म ही नहीं है कि उनको लिटा कर उनके गले पर छुरी फेरी जाए।

"मुझे अफ़सोस है कि कुर्बानी का शब्द इतना अधिक प्रयोग हुआ है और हमारे राजनीतिक आन्दोलनो ने उसका ऐसा ग़लत इस्तेमाल किया है कि वह अपनी ताक़त को खो चुका है। कुर्बानी तो वह चीज़ है कि इसको सुनते ही बदन के रोंगटे खड़े हो जाएं लेकिन हम कुर्बानी का शब्द जब प्रयोग करते हैं तो नौकरी की कुर्बानी को, वेतन की मामूली सी कुर्बानी को सब कुछ समझते हैं। लेकिन कुर्बानी वह महान चीज़ है जिसका इतिहास इब्राहीम अलै० की कुर्बानी पर ख़त्म होता है। हर चीज़ के नसब का शजरा होता है। मस्जिद की नसब का शजरा, इब्राहीम अलै० की बनायी हुई मस्जिद काबा यानि बैतुल्लाह से मिलता है और जिस मस्जिद का नसब मस्जिदे इब्राहीमी पर जाकर ख़त्म न हो वह मस्जिद अल्लाह का घर कहलाने की अधिकारी नहीं वह नुकसान पहुंचाने वाली मस्जिद है और जिस मदरसे के नसब का शजरा नबसे सफ़हा–ए–नबवी स०अ० पर ख़त्म न हो, वह मदरसा बुद्धिमता का नहीं जाहिलियत का केन्द्र है। तो इस तरह मैं कहूंगा कि जिस कुर्बानी का शिजरा–ए–नसब इब्राहीम ख़लीलुल्ला के त्याग के भाव व अल्लाह से मुहब्बत और हज़रत इस्माईल की बेनफ़सी व तस्लीम व रज़ा पर ख़त्म न हो वह सही नसब के नहीं है।

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी रह०

कुरआनी इफ़ादात : ७१–७३

بسم الله الرحمن الرحيم

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक:९ सितम्बर २०१५ ई० वर्ष:६

संरक्षक: हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी (अध्यक्ष – दारे अरफ़ात)

निरीक्षक
मो० वाज़ेह रशीद हसनी नदवी
जनरल सेकेरेट्री- दारे अरफ़ात

सह सम्पादक
मो० नफ़ीस ख़ॉ नदवी

सम्पादकीय मण्डल
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी
अब्दुस्सुबहान नाख़ुदा नदवी
महमूद हसन हसनी नदवी

मुद्रक
मो० हसन नदवी

अनुवादक
मोहम्मद सैफ़

E-Mail: markazulimam@gmail.com www.abulhasanalinadwi.org

इस अंक में:

इस देश में मुसलमानों की ज़िम्मेदारी.....................२
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

हज इश्क व मुहब्बत का दृश्य.......................३
मौलाना अब्दुलल्लाह हसनी नदवी रह०

सीरत–ए–नबवी कुरआन करीम के आइने मे.......५
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

नमाज़ की शर्तें..७
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

बेपर्दगी की हानियाँ.................................१०
मुहम्मद समआन ख़लीफ़ा नदवी

जन्नती हाजी...१२
मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

कुर्बानी का उद्देश्य...................................१३
मुहम्मद अमीन हसनी नदवी

ईदुल अज़हा अहकाम व मसाएल...................१४

सात चीज़ों के आने से पहले नेक काम कर लो..१८
मुफ़्ती मुहम्मद तक़ी उस्मानी

अनमोल वचन..२०
हज़रत जैनुल आबदीन इब्ने अली (रज़ि०)

सम्पादक: बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,यू०पी०.229001

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला खाँ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

प्रति अंक 10रू

वार्षिक 100रू०

सम्पादकीय इस देश में मुसलमानों की ज़िम्मेदारी

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नद्दवी

इस देश में जहाँ ग़ैरों की अधिकता है। जहाँ दिमाग़ों में तरह तरह के सवाल पैदा किए जा रहे हैं। उनको दिमागों में ज़हर भरने की साज़िशे की जा रही हैं। ऐसे में मुसलमानों की ज़िम्मेदारी बहुत बढ़ जाती है। मगर अफ़सोस की बात यह है कि सब कुछ होने के बावजूद मुसलमानों के अन्दर इस बात का एहसास नहीं। भविष्य की उनको कोई चिन्ता नहीं है। वह भविष्य जिसका संबंध देश से भी है और मुसलमानों से भी। मुसलमानों को इस देश से अलग नहीं किया जा सकता है। वे इस देश के लिए व्यवहार व चरित्र के प्रजव्वलित दीप की तरह हैं। अगर यह दीप न रहे तो देश ख़तरे में पड़ जाएगा। अफ़सोस है उस बहुसंख्यक वर्ग पर भी जिसको इसका ज़रा भी ध्यान नहीं कि मुसलमान इसी देश का हिस्सा हैं और उनकी कमज़ोरी से देश कमज़ोर होगा। ग़फ़लत दोनों तरफ़ से है किन्तु मुसलमान एक संदेश देने वाली क़ौम है। उनके ऊपर जो ज़िम्मेदारी है वह बहुत बड़ी है और वास्तविकता यह है कि मुसलमानों ने ही इसे एक देश बनाया। यहां के लोगो को जीने का ढंग सिखाया और देश को बहुत कुछ दिया। अब भी यह ज़िम्मेदारी मुसलमानो पर ही लागू होती है कि वे इस डूबती हुई नैय्या को पार लगाने का प्रयास करें। लेकिन इसके लिए मुसलमानों को अपना महत्व साबित करना पड़ेगा और यह बताना पड़ेगा कि उनका अस्तित्व इस देश के लिए कितना आवश्यक है। उन्होंने इस देश को बहुत कुछ दिया है और अब भी वे देने की स्थिति में हैं। उनका काम लेना नहीं है वे इस देश में देने के लिए आये थे।

इस देश के वर्तमान हालात केवल मुसलमानों के लिए नही बल्कि पूरे देश के लिए ख़तरनाक होते जा रहे हैं। किसी देश का दो भागों में बंट जाना चाहे वह ज़मीनी बंटवारा न हो, बड़ा ख़तरनाक होता है। इसके परिणाम में अलगाव का वह वातावरण बन जाता है कि फिर उन्नति के ठोस और लाभदायक काम कठिन हो जाते हैं और वह देश पतन के मार्ग पर चल पड़ता है।

बहुसंख्यक वर्ग को एक साम्प्रदाय विशेष के विरुद्ध जिस प्रकार ज़हर से भरा जा रहा है और गढ़–गढ़ कर फ़र्ज़ी बातें उनके दिमाग़ों में बिठाई जा रही हैं और विशेष रूप से स्कूलों के पाठ्यक्रम के द्वारा नफ़रत का जो बीज बोया जा रहा है उससे नयी नस्ल के अन्दर साम्प्रदायिकता तीव्र गति से पैदा होती चली जा रही है। जो वर्ग यह काम कर रहा है उसे न देश से कोई सरोकार है न देश की उन्नति से कोई लेना–देना है। वह केवल अपनी रोटियां सेकने में लगा हुआ है। किन्तु अफ़सोस उन समझदार लोगो पर है जो कभी–कभी अनजाने में उनका शिकार बन जाते हैं और देश को नुक़सान पहुंचा देते है।

इस समय मुसलमानों की सबसे बड़ी ज़िम्मेदारी यह है कि वे बहुसंख्यको के दिमागों को साफ़ करने का प्रयास करें। इसके लिए जो संभव हो वे तरीक़े अपनाए जाएं और अमली तौर पर ऐसी शक्ले अपनायी जाएं जिनको देखकर ग़लतफ़हमियां दूर हों और इस्लाम की सही तस्वीर लोगो के सामने आ सके।

इस समय मीडिया ने जो यहूदियों के शिकंजे में जकड़ा हुआ है, मुसलमानों को निशाना बना रखा है। फ़र्ज़ी चीज़े बना–बना कर दिखायी जाती हैं और उनको देखकर यहां के लोगों के ज़हनों मे तरह–तरह के सवाल पैदा होते हैं। मुसलमानों को इसके मुक़ाबले के लिए सही तस्वीरें पेश करनी होगी और उस ताक़त व उन साधनों के साथ उसे सामने लाना होगा जो ताक़त व साधन इस समय मुसलमानो के खिलाफ़ इस्तेमाल किये जा रहे हैं। इसके लिए बड़ी प्लानिंग की ज़रूरत है। बहुत सोच–विचार की आवश्यकता है एवं उन बहुसंख्यकों को साथ में लेकर काम करने की ज़रूरत है जो साफ़ व खुला हुआ ज़हन रखते हैं और ठन्डे दिल से सोचते हैं। जिनके दिलों में देश की सच्ची मुहब्बत है और देश को दुनिया के नक्शे में श्रेष्ठ स्थान पर देखना चाहते हैं। जो इस्लाम और मुसलमानों के बारे में सच्चाई के साथ पढ़ते हैं और सोचते हैं और ग़लतफ़हमियों का शिकार नहीं होते। ऐसे लोगो को साथ लेकर पूरे देश में एक नया वातावरण स्थापित करने की अत्यधिक आवश्यकता है। जो शांति का वातावरण हो, सुकून व इत्मिनान का वातावरण हो और जिसमें देश की उन्नति के लिए ठोस एवं सकारात्मक कार्य आसानी के साथ सोचे जा सकें और किये जा सकें।

हज
इश्क़ व मुहब्बत का मज़हर

मौलाना सैय्यद अब्दुल्लाह हसनी नदवी रह०

हज इस्लाम के अरकानो (स्तम्भ) में से है जिस पर इस्लाम की बुनियाद है। अल्लाह तआला ने सभी मुसलमानो पर जो हैसियत वाले हैं हज को ज़रूरी कर दिया है, ताकि वे अल्लाह के दरबार में हाज़िर हों। क्योंकि हज मुहब्बत और इश्क़ व सरमस्ती का मज़हर (प्रदर्शन) है। अल्लाह तआला ने इन्सानों के अन्दर जो जज़्बात (भावनाएं) रखे हैं उनके सुकून का सामान भी अल्लाह तआला ने दिया है। अगर उनके जज़्बातो के सुकून का सामान न होता तो यह दीन मुकम्मल और हर पहलू से कामिल (सम्पूर्ण) न होता। इसीलिए अल्लाह तआला ने इस दीन को फ़ितरत के मुताबिक़ रखा है और मुकम्मल तरीक़े पर पूरी दुनिया के लिए अता फ़रमाया है।

इन्सानी जज़्बात के सुकून के लिए अल्लाह तआला ने अपने घर की ज़ियारत (दर्शन) को तय किया है और यह हुक्म दिया है कि सभी लोगों पर अल्लाह के घर का हज ज़रूरी है। शर्त यह है कि वहां तक सफ़र करने के साधन हों। लेकिन अगर कोई पास साधन होने के बावजूद हज नहीं करता तो उसके बारे में फ़रमाया गया है कि ऐसे लोगों का यह काम काफ़िराना है। जिस तरह ज़कात के सिलसिले में यह कहा गया है कि अगर कोई आदमी ज़कात अदा न करे तो उसके पहलुओं को आग से दाग़ा जाएगा और उसका खज़ाना उसके लिए आग बन जाएगा और उसकी ज़कात बहुत ज़हरीले सांप की शक्ल में उसको डसेगी। ऐसे ही यहां फ़रमाया कि जो शख़्स हज कर सकता है फिर भी नहीं करता है तो यह बहुत बड़ी बेवफ़ाई है, बड़ी नाशुक्री है और इस तरह की नाशुक्री करने वाले के बारे में अल्लाह तआला फ़रमाता है कि उससे मेरा भी कोई संबंध नहीं है। क्योंकि अल्लाह तआला सारे जहानो से बेनियाज़ है हाँ यह है कि अगर आप आएंगे तो आप का फ़ायदा है। खुदा का कोई फ़ायदा नही है। मालूम हुआ कि अगर कोई सच्चा इन्सान है और वह अपने जज़्बात को सही जगह पर लगाना चाहता है, तो उसको हज करना चाहिए।

हज के बारे में कहा जाता है कि हज़रत इब्राहीम अलै0 ने जब अल्लाह के घर की ज़ियारत (दर्शन) के वास्ते हज करने की आवाज़ लगाई थी और उस वक़्त जिन्होंने लब–बैक कहा था आज तक उसी लब बैक कहने के नतीजे में हर साल दुनिया भर के अलग–अलग इलाक़ो के लोग हज करने को जाते हैं। क्योंकि यह इब्राहीम अलै0 की आवाज़ पर लबबैक कहने का एक मज़हर (दर्शन) है। लेकिन अस्ल में अगर देखा जाए तो मालूम होगा कि यह अल्लाह की एक आवाज़ थी जिसको आम करने का हुक्म हज़रत इब्राहीम अलै0 को दिया गया था। इसीलिए उन्होंने आवाज़ लगाई थी। यूं भी हज़रत इब्राहीम अलै0 के बारे में अल्लाह ने इरशाद फ़रमाया है : "मैं तुमको लोगो का मुक्तदी (आदर्श) बनाता हूं।" और यही वजह है कि हज के सभी कामों में हज़रत इब्राहीम अलै0 की यादों ही को ताज़ा किया जाता है। जिसको पूरी दुनिया के लोग एक ही तरीक़े पर अंजाम देते हैं। क्योंकि अल्लाह तआला ने हज़रत इब्राहीम को किसी क़ौम या बिरादरी का आदर्श नहीं बनाया था बल्कि तमाम इन्सानों का इमाम बनने का सम्मान दिया था।

अल्लाह तआला ने हज के अन्दर एक मुहब्बत की चिंगारी रखी है। क्योंकि अल्लाह ही के हाथ में सबकुछ है। अगर यूं देखा जाए तो काबा सिर्फ़ एक काले कपड़े में लिपटी हुई इमारत है। लेकिन अल्लाह की कुदरत का अजब मज़हर (दर्शन) है कि अल्लाह ने उसको ऐसा आकर्षित बना दिया है कि बड़े–बड़े हुस्न व जमाल के पैकर भी वहां जाकर अपने जमाल व कमाल को, अपने हुस्न को यहां तक कि खुद को भी भूल जाते हैं। क्योंकि काबा हर एक को अपनी तरफ़ खींच लेता है। इसलिए कि अल्लाह तआला ने काबे के अन्दर ख़ास कशिश रखी है। क्योंकि सारी बातें निसबत (लगाव) से होती हैं और काबे की निसबत खुदा से है इसलिए जहां ये निसबत आयी आदमी एकदम से कहां से कहां पहुंच गया और उसका मक़ाम इतना बुलन्द हो गया कि उस तक कोई पहुंच नहीं सकता। कोई घर उस घर का मुक़ाबला नहीं कर सकता। इसी तरह कुरआन मजीद में वही अल्फ़ाज़ हैं जो हम और आप बोलते हैं और ज़बान भी वही है जिसमें लोग बोलते हैं। लेकिन चूंकि उसको अल्लाह ने अपना कलाम बनाया है इसलिए एक ख़ास कशिश और जाज़्बियत पैदा हो जाती है। हुस्न व जमाल, रानाई व दिलरुबाई उभर कर आ जाती है। इस तरह यू तो सभी इन्सान बराबर हैं लेकिन जिसको अल्लाह ने कहाः मेरा नबी तो वहां "मेरा" कहने ही से उसका मक़ाम बुलन्द हो गया। इसी तरह किसी बन्दे को अल्लाह ने कहा "मेरा वली" तो फ़ौरन

उसका मक़ाम ऊंचा हो गया। अस्ल में उसी का नाम निसबत है। जब अल्लाह की निसबत किसी चीज़ को हासिल हो जाती है तो उसका स्थान बहुत श्रेष्ठ हो जाता है। लिहाज़ा काबा को भी यहां वही निस्बत हासिल है।

हज़रत शाह वलीउल्लाह देहलवी रह0 ने लिखा है कि दुनिया इतनी तुच्छ और पस्त व बेक़ीमत (मूल्यहीन) है कि आसमान के मुक़ाबले में उसकी कोई हैसियत नहीं है। लेकिन चार चीज़े अल्लाह ने इसके अन्दर ऐसी रखी हैं कि जिसकी वजह से यह दुनिया आसमान वालों से आंखे मिलाती है और उसके मुक़ाबले में आ जाती है। जिनमें से एक काबा भी है। क्योंकि काबा ऐसा है जिसने मानो कि दुनिया को रोक लिया है। जिस तरह कश्ती ठहर जाती है उसी तरह दुनिया को उसने ठहरा दिया है। इसी वजह से कुरआन में काबा को "कयामल लिन्नास" कहा गया है। इसीलिए रिवायत में आता है कि जब तक अल्लाह अल्लाह कहने वाला दुनिया में कोई व्यक्ति शेष रहेगा, उस वक़्त तक क़यामत नहीं आएगी और काबा का पूर्ण रूप से उद्देश्य ही सिर्फ़ अल्लाह–अल्लाह है। यानि तौहीद का क़ायम होना। यद्यपि जब एक व्यक्ति भी ऐसा बाक़ी न रह जाएगा तो दुनिया ख़त्म हो जाएगी और उस वक़्त काबा भी उठा लिया जाएगा मानो काबा को भी उसी वक़्त तक बाक़ी रहना है, जब तक दुनिया रहेगी। मालूम हुआ कि दुनिया का शेष रहना काबे से जुड़ा हुआ है और यही वजह है जिसकी बुनियाद पर दुनिया आसमान पर रश्क करती है। लिहाज़ा अल्लाह ने हर मुसलमान पर हज को लाज़िम क़रार दिया है।

हज के हुक्म के साथ साथ अल्लाह तआला ने ये बाते भी बता दीं हैं कि जब हज अदा किया जाए तो ख़ालिस नियत के साथ करना ज़रूरी है। कोई ग़लत काम रास्ते में नही होना चाहिए। और कोई बेतकल्लुफ़ी की बातें उससे भी नहीं होनी चाहिए जिससे आम दिनों में करना जायज़ होता है। जिसको (फ़लम यरफुस) से ताबीर किया गया है। यानि जिस तरह की बातें आदमी अपने घर में अपनी बीवी से करता है वो भी हज के सफ़र में न करे और बेकार की कोई बात न करे और झगड़े वग़ैरह की बात भी न करे जिसके मना करने की वजह यह है कि आम तौर पर हज के दौरान इन चीज़ों की अधिक संभावनाएं रहती हैं। इसलिए कि अल्लाह ने काबा के अन्दर कशिश रखी है कि इतने अर्से से वहां सारी दुनिया आ रही है और वहां मर्दों और औरतों की भीड़ होती है लिहाज़ा खुदा न ख़्वास्ता अगर वहां कोई ग़लत काम की तरफ़ आकर्षित हो जाता है तो वहां ज़्यादा गुनाह का भी ख़तरा था। इसलिए एहतियात के लिए बिल्कुल पाबन्दी लगा दी गयी। इसीलिए अल्हम्दुलिल्लाह आज तक ऐसा कोई ग़लत वाक़्या भी नहीं पेश आया क्योंकि वहां सारे मर्द और सारी औरतें एक दूसरे को नहीं देखते बल्कि काबे को देखते हैं और वही उनका अस्ल महबूब होता है गोया कि उस वक़्त मर्द–औरतों से मुहब्बत को और औरतें मर्द की मुहब्बत को बिल्कुल छोड़ देती है और दिल व दिमाग़ में सिर्फ़ एक ही मुहब्बत होती है वो है काबे की मुहब्बत और उसके पैदा करने वाले की मुहब्बत।

खुलासा यह कि हज में तमाम बेकार की चीज़ों से दूर रहना चाहिए और हज के दौरान कहीं भी किसी भी प्रकार की मिलावट नहीं आना चाहिए। इसीलिए जब पहले ज़माने में लोग हज को जाते थे तो किसी को नहीं बताते थे ताकि किसी तरह के दिखावे का शुब्हा भी दिल के अन्दर दाख़िल न हो। लेकिन आज कल न जाने क्या–क्या होता है। हालांकि यह सब बातें बिल्कुल ग़ैर इस्लामी है जिनसे इस्लाम का कोई संबंध नहीं। ग़रज़ कि हर इन्सान को चाहिए कि वो हज के लिए हर वक़्त तैयार रहे और इसका शौक़ हमेशा रहे और यह आरज़ू रखे कि अल्लाह के दरबार में हाज़िरी नसीब हो जाए और जिस तरह ज़कात नमाज़ का पूरक है उसी तरह हज भी रोज़ा का पूरक है। क्योंकि रोज़े में इन्सान को अल्लाह तआला से ग़ैर मामूली संबंध पैदा हो जाता है और उसी संबंध से सुलगी हुई चिन्गारी के नतीजे में इन्सान की लगी हुई प्यास को हज पूरी तरह से बुझाता है। लिहाज़ा जब इन्सान अल्लाह के दरबार में हाज़िरी देता है तो उसकी मुहब्बत की प्यास बुझ जाती है और उसकी बेचैनी की कैफ़ियत भी ख़त्म हो जाती है।

हज में हर व्यक्ति की कोशिश यह होनी चाहिए कि उसका दिल भी अदा–ए–इब्राहीमी के नतीजे में इब्राहीमी बन जाए। वह ग़ैरुल्लाह को बिल्कुल छोड़ दे और जो वाक़्ये हज़रत इब्राहीम अलै0 के साथ उनकी ज़िन्दगी में पेश आए उनको बार–बार ज़हन मे ताज़ा करता रहे कि आपने किस तरह अपने आराम को छोड़ा था और तकलीफ़ वाले इलाक़े में तशरीफ़ ले गए थे और गैरुल्लाह से मुहब्बत को त्याग दिया था और सिर्फ़ अल्लाह से मुहब्बत को तरजीह दी थी। यहां तक कि अपने घर वालों को भी छोड़कर अल्लाह को अख़्तियार किया था और इस पर उनके लिए अल्लाह तआला की तरफ़ से कैसी ग़ैर मामूली मदद आयी थी लेकिन हक़ीक़त यह है कि उन विचारों की ओर ध्यान आम तौर पर बहुत मुश्किल होता है।

क्रमशः

सीरत-ए-नबवी

क़ुरआन करीम के आइने में

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

आज्ञापालन: जिस तरह इताअत (आज्ञापालन) न करने पर सख़्त वईद की बात आती है उसी तरह इताअत करने पर वादों और अल्लाह तआला के ईनामों का भी जगह–जगह ज़िक्र किया गया है: "और नमाज़ क़ायम रखो और ज़कात देते रहो और रसूल की बात मानते रहो ताकि तुम पर रहमत हो।" (अलनूर: 56) इस आयत से यह इशारा भी मिलता है कि नमाज़ क़ायम करना और ज़कात अदा करना उसी वक़्त मुमकिन है जब रसूलुल्लाह स0अ0 का हुक्म माना जाए। जब इताअत के काम रसूलुल्लाह स0अ0 के अनुसार किए जाएंगे तो अल्लाह की रहमत आएगी। इसी बात को दूसरी आयत में यूं बयान किया गया है: "और ईमान वाले मर्द और ईमान वाली औरतें एक दूसरे के मददगार हैं, वे भलाई सिखाते हैं और बुराई से रोकते हैं और नमाज़ क़ायम रखते हैं और ज़कात अदा करते हैं और अल्लाह और उसके रसूल की इताअत करते हैं यही लोग हैं जिन पर अल्लाह की रहमत होने वाली है बेशक अल्लाह ज़बरदस्त है हिकमत वाला है।" (तौबा: 71)

इस आयत में भी सब कामों के बाद बुनियादी काम जो ऊपर दिया गया है, वह इताअत है अल्लाह और रसूलुल्लाह स0अ0 की। इससे भी यही इशारा मिलता है कि सब कामों का कुबूल होना इताअत पर टिका हुआ है और जब इताअत होगी तो अल्लाह तआला की ख़ास रहमत आएगी। "जिन पर अल्लाह की रहमत होने वाली है।"

एक जगह आम अन्दाज़ में यह बात कही गयी: "और अल्लाह और रसूल की पैरवी करो ताकि तुम पर रहम किया जाए।" (आले इमरान: 132)

सूरह निसा की आयत में इरशाद होता है: "और जो लोग अल्लाह और रसूल की पैरवी करेंगे तो वे उन लोगों के साथ होंगे जिनपर अल्लाह ने ईनाम फ़रमाया यानि अम्बिया, सिद्दीक़ीन व शोहदा और नेकोकार और ये क्या ही ख़ूब साथ हैं, ये फ़ज़ल अल्लाह ही की तरफ़ से है और अल्लाह ही का इल्म काफ़ी है।" (निसा: 69) इस आयत में पैरवी पर अल्लाह की तरफ़ से बड़े मर्तबे का ज़िक्र है। ऐसा व्यक्ति नबियों व सिद्दीक़ीन (सत्यवानों) के साथ होगा लेकिन यहां ये ध्यान रहे कि अमली तौर पर यह इताअत ज़िन्दगी के हर भाग में पायी जाए। आदमी फूंक–फूंक कर क़दम रखे कि कहीं क़दम अल्लाह के रसूल स0अ0 के तरीक़े से हट न जाए।

आयत के आख़िरी हिस्से में यह बात भी साफ़ की जा रही है कि यह सब कुछ केवल इरादे ही से नहीं होता। इरादे और कोशिश के साथ अल्लाह से दुआ की जाए कि उसकी मदद और फ़ज़ल से ही सब काम मुमकिन हैं और {वकफ़ा बिल्लाहि अलीमा} का वाक्य बता रहा है कि केवल दावा काफ़ी नहीं है। अल्लाह के यहां सब खरा–खोटा खुला हुआ है। काम का कितना हिस्सा आप स0अ0 की पैरवी के साथ है और कितना हिस्सा उससे हटा हुआ है सब अल्लाह को मालूम है। इसलिए ध्यान रखने की ज़रूरत है। कोशिश पूरी की जाए। अल्लाह से मदद मांगता रहे और ध्यान रखा जाए तो इन्शाअल्लाह अल्लाह का ऐसा बन्दा हक़ीक़त में सुन्नत की पैरवी करने वाला गिने जाने के क़ाबिल है। सूरह निसा में विरासत के बंटवारे को तफ़सील के साथ बयान करने के बाद इरशाद हुआ: "जो अल्लाह के (तय किए हुए) हुदूद (सीमाएं) से तजाउज़ करेगा (लांघेगा) अल्लाह उसको दोज़ख़ की आग में दाख़िल करेगा उसी में वह हमेशा पड़ा रहेगा और उसके लिए बहुत ही ज़िल्लत वाला अज़ाब है।"

क़ुरआन मजीद में जहां कहीं भी अल्लाह की इताअत का ज़िक्र है वहीं अल्लाह के रसूल स0अ0 की इताअत का भी ज़िक्र है। उससे दो बातें साफ़ हो गयीं हैं कि नजात के लिए तन्हा अल्लाह की इताअत काफ़ी नहीं है, रसूल की इताअत भी ज़रूरी है जबकि रसूल की इताअत हक़ीक़त में

अल्लाह ही की इताअत है। जैसा कि गुज़र चुका है कि "जिसने रसूल की इताअत की उसने अल्लाह की इताअत की।"

लेकिन वह बातें जो आप स0अ0 ने इरशाद फ़रमायी और उनकी निसबत ज़ाहिर में अल्लाह की तरफ़ नहीं फ़रमायी उन सब पर अमल करना ज़रूरी है। दूसरी बात यह है कि आप स0अ0 की इताअत के बग़ैर अल्लाह की इताअत मुमकिन नहीं। अल्लाह के हुक्मों की तफ़सील का केवल एक ही साधन है और वह रसूलुल्लाह स0अ0 की ज़ाते गिरामी है। आयत–ए–शरीफ़ा में यह बात दो टूक अन्दाज़ में कह दी गयी है कि जो कोई इताअत करेगा उसको जन्नतों में डाल दिया जाएगा और जो नाफ़रमानी करेगा, उसको जहन्नम में डाला जाएगा और अपने किए की सज़ा उसको भुगतनी पड़ेगी।

ज़ाहिरी तौर पर बात न मानने का नतीजा उहद की जंग के मौक़े पर जब आप स0अ0 ने " " पर तीरन्दाज़ो को लगाया था और हुक्म दिया कि वे किसी भी सूरत में वहां से न हटे लेकिन जब फ़तेह नज़र आने लगी और गनीमत के माल की ओर बढ़ने लगे तो उन लोगो को भी ख़्याल हुआ कि ज़िम्मेदारी पूरी हो गयी है और उनमे से एक तादाद इस ज़ाहिर नाफ़रमानी का नतीजा ज़ाहिर शिकस्त की शक्ल में सामने आया और उम्मत को यह पैग़ाम दिया गया कि हर सूरत में अपने नबी की बात माननी है, "जब तुम ऊपर चढ़ते चले जा रहे थे और किसी को मुड़कर देखते भी न थे और रसूल पीछे से तुम्हें आवाज़े दे रहे थे तो उसने (अल्लाह ने) तुम्हें तंग करने के बदले में तंग किया ताकि तुम उस चीज़ पर ग़म न करो जो तुम्हारे हाथ से निकल गयी और न उस पर जो तुम्हें मुसीबत लाहक़ हुई और तुम जो कुछ करते हो अल्लाह उसे ख़ूब जानता है।" (आले इमरानः 153)

"जबल–ए–रिमात" से लोगो के हटने के बाद ख़ालिद बिन वलीद जो उस वक़्त मुश्रिकों के साथ लड़ रहे थे उनको मौक़ा मिल गया। उन्होंने पीछे से हमला किया जिससे मुसलमान तितर–बितर हो गए और पहाड़ पर चढ़ने लगे। आप स0अ0 आवाज़ें दे रहे थे मगर हंगामे में आवाज़ सुनाई नहीं पड़ती थी। आख़िरकार हज़रत काब बिन मालिक रज़ि0 चिल्ला चिल्ला कर पुकारा तो लोग जमा हुए। अल्लाह फ़रमाता है कि, "तो उसने तुम्हें तंग करने की पादाश में तंग किया।" यानि एक ग़लती की वजह से सूरतेहाल बिगड़ गई और उसका नुक़सान उठाना पड़ा।

हर हाल में इताअतः अल्लाह के रसूल स0अ0 की पैरवी हर हाल में ज़रूरी है। सहाबा तो अव्वलीन मुख़ातिब थे और उनकी इताअत का हाल यह था कि ऐसी फ़रमाबरदारी के नमूने शायद ही देखने में आएं। शराब के हराम होने का ऐलान हुआ, आप स0अ0 ने क़ासिद भेजा ताकि लोगो को बता दे। आप स0अ0 की तरफ़ से ऐलान हुआ और लोगो ने मुंह लगे जाम तोड़ दिए। एक बार आप स0अ0 खुत्बे के लिए खड़े हुए और फ़रमाया कि लोग बैठ जाए, जो जहां खड़ा था वहीं बैठ गया। जो लोग अभी मस्जिद में दाख़िल हो रहे थे वे दरवाज़े ही पर बैठ गए। आप स0अ0 ने फ़रमाया अरे तुम वहीं बैठ गए, आगे आ जाओ, उन्होंने फ़रमाया कि मुझको शोभा नहीं देता कि आप फ़रमाएं कि बैठ जाओ, फिर मैं खड़ा रहूं। एक सहाबी रेशम का लिबास पहन कर आए। आप स0अ0 ने नापसंदीदगी फ़रमायी। वे मजलिस से निकल कर गए और उतार कर उसको आग लगा दी। लोगो ने कहा कि औरतों के काम आ जाएगा जलाओ मत, कहने लगे कि जिसको अल्लाह के रसूल स0अ0 ने नापसंद किया, उसको बाक़ी रखना मुझे गवारा नहीं। इस तरह के न जाने कितने वाक़्यात हैं। इताअत के अध्याय में विषयों का दर्जा रखते हैं और रहती दुनिया तक के लिए नमूना हैं। ऐसे लोगो के बारे में कुरआन मजीद आप स0अ0 की ज़बानी कहलाता है, "फिर भी अगर वे आप से बहस करें तो आप कह दीजिए कि मैंने और मेरी बात मानने वालों ने अपनी ज़ात को अल्लाह के हवाले कर दिया है।" (आले इमरानः 153)

आप स0अ0 ने ऐसे लोगो को अल्लाह के हुक्म से अपने साथ शामिल फ़रमाया है और यक़ीनन ये लोग सहाबा के लिए एक बड़ी गवाही हैं।

नाफ़रमानों का अन्जामः बात न मानने वालों और नाफ़रमानी करने वालो के अन्जाम को बताते हुए कुरआन में बहुत सी जगह किया गया हैः "जिन्होने इनकार किया और रसूल की बात न मानी उस दिन वे तमन्ना करेंगे कि काश वे मिट्टी में मिला दिए गये होते।" (आल–ए–इमरानः 153)

क्रमशः

नमाज़ की शर्तें

मुफ्ती राशिद हुसैन नदवी

नमाज़ की तीसरी शर्त: क़िब्ले की ओर रुख़ करना

काबा की तरफ़ रुख़ करने का हुक्म ख़ुद कुरआन मजीद में दिया गया है। इरशाद है: "बस अब आप अपने रुख़ को मस्जिद–ए–हराम की तरफ़ कर लीजिए और तुम लोग जहां कहीं भी हो अपने रुख़ को उसी की तरफ़ कर लिया करो।" और मुस्लिम शरीफ़ में हज़रत बरा बिन आज़िब रज़ि0 की रिवायत है फ़रमाते हैं: हमने सोलह या सत्तरह महीने रसूलुल्लाह स0अ0 के साथ बैतुल मक़दस का रुख़ करके नमाज़ पढ़ी फिर हमें काबे की तरफ़ फेर दिया गया।

क़िब्ला तय करने की हिकमत

क़िब्ले की तरफ़ रुख़ करके इस्लाम में नमाज़ पढ़ने का जो हुक्म दिया गया है। कुछ अनजान उसकी हिकमत नहीं समझ पाते हैं और एतराज़ करने लगते हैं कि यह तो एक काबे की नउज़बिल्लाह इबादत करना है। लेकिन ये एतराज़ बिल्कुल ग़लत है। ख़ुद कुरआन मजीद में फ़रमाया गया: "सारा कमाल इसी में नहीं आ गया कि तुम अपना मुंह पूरब को कर लो या पश्चिम को कर लो। लेकिन अस्ल कमाल तो यह है कि कोई शख़्स अल्लाह तआला की ज़ात व सिफ़ात (विशेषताओं) पर यक़ीन रखे और उसी तरह क़यामत का दिन आने पर भी और फ़रिश्तों पर भी और सब आसमानी किताबों पर भी, और पैग़म्बरों पर भी।

दूसरी जगह इरशाद है: "और अल्लाह ही की मिल्कियत हैं सारी दिशाएं पूरब भी और पश्चिम भी तो तुम लोग जिस तरफ़ भी मुंह करो उधर ही अल्लाह तआला का रुख़ है क्योंकि अल्लाह तआला मुहीत (सर्वव्यापी) है और अमल में कामिल (सम्पूर्ण) है।

मुफ़्ती शफ़ी साहब लिखते हैं: कुछ महीनों के लिए बैतुल मुक़द्दस को क़िब्ला करार देने का हुक्म देकर अमल के साथ और आप स0अ0 ने कह कर इस बात को साफ़ कर दिया कि किसी ख़ास मकान या दिशा को क़िब्ला करार देना इस वजह से नहीं कि माज़ अल्लाह ख़ुदा तआला उस मकान या उस दिशा के साथ मौजूद है। किसी ख़ास दिशा को दुनिया का क़िब्ला करार देना दूसरी हिकमतो और मसलहतों पर आधारित है। क्योंकि जब अल्लाह तआला की तवज्जो किसी दिशा विशेष या जगह के साथ निश्चित नहीं तो अब अमल की दो सूरतें हो सकती हैं। एक यह कि हर व्यक्ति को अख़्तियार दे दिया जाए कि जिस तरफ़ चाहे रुख़ करके नमाज़ पढ़े दूसरे ये कि सबके लिए कोई ख़ास दिशा तय कर दी जाए। साफ़ है कि पहली हालत में एक फूट पड़ जाएगी कि दस आदमी नमाज़ पढ़ रहे हैं और हर एक का रुख़ अलग–अलग और हर एक का क़िब्ला जुदा–जुदा है। और दूसरी सूरत में संगठन और एकता का अमली सबक़ मिलता है।

यही कारण है कि हर हालत में क़िब्ला की ओर रुख़ करना शर्त नहीं। कुछ हालात में तहर्री (स्वयं से निश्चित करके) से नमाज़ पढ़ी जा सकती है। बाज़ हालात में किसी भी रुख़ पर पढ़ी जा सकती है। जिसकी तफ़सील आप आगे मसाएल में पढ़ेंगे।

इस ज़रूरी नोट के बाद हम इस्तक़बालिया क़िब्ला से जुड़े हुए कुछ ज़रूरी मसले क्रमवार ज़िक्र कर रहे हैं:

1– कोई शख़्स अगर मक्के मुकर्रमा में हो और ऐसी जगह हो जहां से बैतुल्लाह शरीफ़ की इमारत नज़र आती है जैसे वो मस्जिदे हराम में मौजूद हो या किसी ऐसी ऊंची इमारत इत्यादि में हो जहां से क़िब्ला दिखाई देता है तो उसके लिए ख़ुद काबे की तरफ़ रुख़ करना ज़रूरी है। ऐन क़िब्ला की तरफ़ वो न करे तो नमाज़ नहीं होगी और अगर बीच में कोई इमारत इत्यादि है जिसकी वजह से ऐन काबा नज़र न आए तो काबे की दिशा की ओर रुख़ करना काफ़ी होगा।

2– जो शख़्स मक्के मुकर्रमा के अलावा दुनिया की किसी दूसरी जगह पर हो तो उसका क़िब्ला काबे की

दिशा है ऐन काबा नही है। काबे की दिशा से मुराद साफ़ करते हुए मुफ़्ती शफ़ी साहब फ़रमाते हैं:

"और हिन्दुस्तान में सहल और आसान तरीक़ क़िब्ले की दिशा मालूम होने का है कि गर्मी के मौसम के सबसे बड़े दिन (22 जून) और उसी तरह सर्दी के मौसम के सबसे छोटे दिन (22 सितम्बर) में सूरज डूबने का मौका देखा जाए क़िब्ला इन दोनो मौक़ो के बीच हो। यानि इन दोनो मौक़ो के बीच जिस केन्द्र की ओर रुख़ करके नमाज़ पढ़ी जाएगी सही हो जाएगी।

3– जिन शहरों और आबादियों में पुरानी मस्जिदें हों उन्हीं मस्जिदों को क़िब्ले का मेयार बनाया जाएगा और जहां पहले से मस्जिदे न हों तो वहां के आस पास रहने वाले मुसलमानों से क़िब्ले की खोज की जाएगी और जिन जगहों पर कोई बताने वाला न मिले जैसे सहरा और जंगल जैसी जगहों में हो तो चांद सूरज और कुतुबनुमा के ज़रिए दिशा पहचान से और विचार–विमर्श करके क़िब्ला तय कर ले।

4– मक्के से बाहर रहने वाले शख़्स ने अगर क़िब्ले की दिशा से कुछ हटकर नमाज़ पढ़ी और मामूली फेरबदल हुआ तो नमाज़ हो जाएगी अगर ज़्यादा फेरबदल हो गया तो नमाज़ नहीं होगी। अल्लामा शामी ने जहीरिया के हवाले से लिखा है कि इन्सान का चेहरा कमाननुमा होता है। इस तरह दाएं–बाएं इन्हराफ़ भी करे तो चेहरे का कुछ हिस्सा क़िब्ले की तरफ़ हो जाता है और शर्त यही है कि रुख़ क़िब्ले की तरफ़ हो। लिहाज़ा इतने इन्हराफ़ से नमाज़ हो जाएगी। दिशाओं के ज्ञान के अनुसार उसको इस तरह बताया गया है कि अगर इन्हराफ़ 45 डिग्री या उससे कम हो तो नमाज़ हो जाएगी। इससे ज़्यादा हो तो नमाज़ नहीं होगी।

5– अगर कोई शख़्स किसी ऐसी जगह हो जहां उपरोक्त पहचान से क़िब्ला मालूम नहीं किया जा सकता। कोई है भी नहीं जिससे पूछे तो उस सूरत में तहर्री का हुक्म है यानि आसार और दिल की गवाही से अन्दाज़ा करे कि क़िब्ला किस तरफ़ होगा फिर उधर ही रुख़ करके नमाज़ पढ़े फिर अगर नमाज़ के दौरान ही मालूम हो गया कि क़िब्ला दूसरी तरफ़ है तो उधर मुड़ जाए नमाज़ लौटाने के ज़रूरत नहीं। इसी तरह नमाज़ पढ़ने के बाद मालूम हुआ कि क़िब्ला दूसरी तरफ़ था तहर्रीमें ग़लती हो गयी थी तब भी नमाज़ लौटाने की आवश्यकता नहीं।

उस हालत में अगर तहर्री के बग़ैर नमाज़ शुरू कर दी तो जायज़ नहीं। इल्ला यह कि नमाज़ के बाद यक़ीनी तौर से पता चले कि सही रुख़ पर नमाज़ पढ़ी है।

6– अगर हवाई जहाज़ या ट्रेन में नमाज़ पढ़नी है तो उसमें भी क़िब्ला का पता करके या तहर्री करके नमाज़ शुरू करनी है। नमाज़ पढ़ने के दौरान अगर ट्रेन या जहाज़ अगर मुड़ जाए तो उसको भी मुड़ जाना चाहिए और अगर मुड़ने का पता नहीं चल सका तो इंशाअल्लाह तआला उसी तरह नमाज़ हो जाएगी।

7– अगर कोई क़िब्ले की तरफ़ रुख़ करने से आज़िज हो तो उससे इस्तक़बालिया क़िब्ला की शर्त साक़ित हो जाती है और वो जिस तरफ़ भी रुख़ करने का कादिर हो उस तरफ़ रुख़ करके नमाज़ पढ़े तो सही हो जाएगी। आजिज़ होने का मतलब यह है कि कोई मरीज़ है, हास्पिटल में भर्ती है और बेड क़िब्ला रुख़ करना मुमकिन नहीं, न वो अपनी कमज़ोरी की वजह से क़िब्ला रुख़ हो सकता है या क़िब्ला रुख़ नमाज़ पढ़ने में किसी दरिन्दा या दुश्मन के हमले का ख़ौफ़ है या माल नष्ट होने का ख़तरा है।

8– अगर किसी ऐसी जगह है जहां पर क़िब्ले की दिशा मालूम है। जैसे हिन्दुस्तान में क़िब्ला मग़रिब की तरफ़ है इसका हर एक को इल्म है, तो अगर किसी ग़ैर मुस्लिम से मग़रिबी दिशा मालूम कर ले फिर उसी रुख़ पर नमाज़ पढ़ ले तो कोई हर्ज नहीं है नमाज़ हो जाएगी। लेकिन अगर किसी ऐसी जगह है जहां इसका पता ही नही है कि क़िब्ला किस सिम्त में है तो ग़ैर मुस्लिम से क़िब्लाा की तहक़ीक़ साबित नहीं होगी जब तक कि दूसरे तरीक़ो से उसकी खोज न हो जाए।

9– मस्जिद–ए–हराम में नमाज़ पढ़ने वाला अगर इस तरह नमाज़ पढ़े कि उसके सामने सिर्फ़ हतीम (काबा का वह पत्थर जो रुक्न और ज़मज़म के बीच है) रहे काबे का कोई हिस्सा न रहे तो उसकी नमाज़ सही नही होगी।

नमाज़ की चौथी शर्त नियत

इबादत की सेहत के लिए नियत शर्त है। उसका हुक्म देते हुए कुरआन मजीद में फ़रमाया गया: "जबकि उनको सिर्फ़ ये हुक्म दिया गया था कि वह अल्लाह की

बन्दगी दीन को उसके लिए ख़ासकर के करें।" और बुख़ारी इत्यादि में हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रज़ि0 की मशहूर हदीस आयी है कि हज़रत मुहम्मद स0अ0 ने फ़रमाया कि: "आमाल का दारोमदार नियतों पर है" और हर शख़्स को सवाब नियत के मुताबिक़ मिलेगा।

नियत का मतलब

अल्लाह तआला की रज़ा हासिल करने के लिए किसी काम को अन्जाम देने का इरादा नियत कहलाता है। ये अस्ल में दिल के इरादे का नाम है जबान से अदा करना ज़रूरी नहीं है बल्कि अफ़ज़ल यही है कि ज़बान से अदायगी के बग़ैर नियत हो जाती है तो ज़बान से नियत न करे लेकिन अगर किसी को ज़बाने से कहे बग़ैर इस्तहज़ार नहीं हो पाता तो उसके लिए बेहतर यही है कि ज़बान से भी अदायगी कर ले।

मसाएल-ए-नियत

1– अकेले नमाज़ पढ़ने वाले के लिए दिल से केवल यह इरादा कर लेना काफ़ी है कि मैं फ़ला वक़्त की फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ रहा हूं नमाज़ की तादाद या क़िब्ले के रुख़ की नियत करना लाज़िम नहीं है।

2– जमाअत से नमाज़ पढ़ने वाले के लिए इसके साथ–साथ ये नियत करना भी ज़रूरी है कि मैं इमाम की इक़्तदा में नमाज़ पढ़ रहा हूं।

3– इमाम के लिए अपने इमाम होने की नियत करना ज़रूरी नही है। लेकिन इमामत का सवाब तभी मिलेगा जब इमामत की नियत कर ले।

4– वित्र की नमाज़ में सिर्फ़ वित्र की नियत काफ़ी है वाजिब कहना शर्त नही है। और सुन्नते चाहे मुअक्कदा हों या ग़ैर मुअक्कदा सिर्फ़ इतनी नियत काफ़ी है कि इतनी रकआत पढ़ रहा हूं। फज्र जोहर तय करना ज़रूरी नहीं है।

5– सही क़ौल के अनुसार तरावीह की नमाज़ सिर्फ़ नमाज़ की नियत से पढ़े तब भी सही हो जाएगी अलबत्ता तरावीह की नियत करना बेहतर होगा।

6– जनाज़े की नमाज़ में नमाज़ की नियत के साथ मैयत के लिए दुआ की भी नियत की जाए।

7– सजदे तिलावत में भी सजदे तिलावत की नियत ज़रूरी है। लेकिन आयते सजदा को तय करना ज़रूरी नहीं है।

स्वीकृत कार्य

अबू नस्ल तमार कहते हैं: एक व्यक्ति बशर बिन हारिस के पास आया और बोला कि मेरा इरादा नफ़िल हज का है, आपका कुछ काम है? उन्होंने पूछा कि तुमने ख़र्च के लिए क्या रखा है? उसने कहा: दो हज़ार दिरहम। बशर ने कहा: तुम्हारा हज से मक़सद क्या है, दुनिया से बेनियाज़ी या काबा का शौक या अल्लाह की रज़ा? उसने कहा: अल्लाह की रज़ा, उन्होने कहा: अच्छा अगर मैं तुम्हें ऐसा उपाय बता दूं कि तुम घर बैठे अल्लाह की रज़ा हासिल कर लो, और तुम यह दो हज़ार दिरहम ख़र्च कर दो, और तुमको यक़ीन हो कि अल्लाह की रज़ा हालिस हो गयी तो क्या तुम उसके लिए तैयार हो? उसने कहा: ख़ुशी से, कहा: अच्छा, फिर जाओ इस पैसे को ऐसे दस आदमियों को दे आओ जो क़र्ज़दार है, वे इससे अपना क़र्ज़ अदा कर दें, फ़क़ीर अपनी हालत ठीक कर ले, औलाद वाले अपने बच्चो का सामान उपलब्ध कराएं, यतीम का इन्तिज़ाम करने वाला उसको कुछ देकर उसका दिल ख़ुश करे और अगर तुम्हें गवारा हो तो एक ही को पूरा माल दे आओ। इसलिए कि किसी की मुसीबत को दूर करना, मजबूर की मदद करना, कमज़ोरों का साथ देना कई नफ़िल हजों से श्रेष्ठ है। जाओ जैसा मैंने तुमसे कहा है वैसा ही करके आओ, वरना अपने दिल की बात हमसे कह दो, उसने कहा! शेख़ सच्ची बात तो यह है कि सफ़र करने विचार है। बशर सुनकर मुस्कुराए और कहा: पैसा जब गन्दा और शक शुब्हे वाला होता है तो दिल मांग करता है कि इससे उसकी इच्छा पूरी की जाए और वह उस समय नेक कामों को सामने लाता है, हालांकि अल्लाह तआला ने अहद किया है कि सिर्फ़ तक़वे वालों के काम को क़ुबूल करेगा।" **(तारीख़ दावत व अज़ीमत: १६४/१)**

बेपर्दगी की हानियाँ

मुहम्मद समआन ख़लीफ़ा नदवी

अल्लाह तआला ने हमारे लिए ज़िन्दगी के जिस निज़ाम को चुना है उसमें हमारे लिए पूरी तरह से भलाई है। इसमें इन्सानी फ़ितरत (प्रकृति) की भरपूर रिआयत (छूट) है और इन्सानों को पूरी सुरक्षा दी गयी है। आइये देखें बेपर्दगी में कौन से नुक़सान छिपे हुए हैं:

1. बेपर्दगी अल्लाह और उसके रसूल स0अ0 की नाफ़रमानी है; और जो अल्लाह और उसके रसूल स0अ0 की नाफ़रमानी करेगा, अल्लाह का कुछ नही बिगाड़ेगा। हदीस शरीफ़ में आया है कि मेरी उम्मत के सारे लोग जन्नत के मुस्तहिक़ होंगे सिवाए उनके जिन्होंने इनकार की रविश अपनायी। पूछा गया कि कौन है जो इनकार की रविश अपनाएगा? फ़रमाया: जिसने मेरी बात मान ली वह जन्नत में दाख़िल होगा और जिसने मेरी नाफ़रमानी की उसने इनकार की रविश अपना ली।

2. बेपर्दगी अल्लाह की रहमत से महरूमी की वजह है। अल्लाह के रसूल स0अ0 का इरशाद है कि मेरी उम्मत के आख़िर में कुछ ऐसी औरतें सामने आएंगी जो कपड़े पहन कर भी ऐसी होंगी कि न पहने हों। उनके सर ऊंटो के कूबड़ की तरह होंगे। ऐसी औरतों पर लानत भेजो क्योंकि वो मलऊन (अल्लाह की रहमत से महरूम कर दी गयी) हैं।

3. बेपर्दगी जहन्नमियों की ख़ासियत है। रसूलुल्लाह स0अ0 का इरशाद है: जहन्नमियों की दो क़िस्मों पर मेरी अभी नज़र नहीं पड़ी है: एक तो उन लोगों की क़िस्म है जिनके हाथ में गाय की दुम की तरह कोड़े होंगे और उससे वे लोगो को मारा करेंगे, दूसरी वे औरतें जो कपड़ा पहनकर भी नग्न होंगी।

4. बेपर्दगी क़यामत के दिन का अन्धकार है। रसूलुल्लाह स0अ0 ने फ़रमाया है कि बेजा बन संवर कर अपने हुस्न की नुमाइश करते हुए अपने घर से निकलने वाली औरत की मिसाल क़यामत के दिन अंधेरे की तरह है उसका कोई नूर नहीं होगा।

आपका इशारा इस तरफ़ है बेजा बन ठन कर अकड़ कर दामन घसीट–घसीट कर चलने वाली औरतें क़यामत के दिन इस हाल में हाज़िर होंगी कि उनके जिस्म पर कालिख और स्याही होगी, मानो अंधेरे की परतें उन पर चढ़ी हुई हों। दुनिया के गुनाहों की लज़्ज़त आख़िरकार गुनाह है। दुनिया की ज़ीनत आख़िरत की गन्दगी है। दुनिया की रोशनी आख़िरत का अंधेरा है।

5. बेपर्दगी निफ़ाक़ है: रसूलुल्लाह स0अ0 ने फ़रमाया कि तुममें से बेहतरीन औरत वह है जो अपने शौहर से बहुत मुहब्बत रखने वाली हो, ख़ूब औलाद जनने वाली हो, शौहर के मिज़ाज के अनुसार चलने वाली और उसके दुख की साझी हो, एवं तक़वा उसके दिल में हो और तुममें सबसे बदतर वे औरतें हैं जो बेपर्दगी के साथ अकड़–अकड़ कर चलती हैं। ऐसी औरतें हक़ीक़त में मुनाफ़िक़ हैं, वे जन्नत में हरगिज़ नहीं दाख़िल होंगी मगर "ग़ुराब–ए–आसम के बराबर।"

"ग़ुराब–ए–आसम" उस कव्वे को कहते हैं जिसकी चोंच और दोनो पर लाल हों। हदीस में इशारा इस तरफ़ है कि जिस तरह कव्वों में ऐसे कव्वे बहुत अलग होते हैं, ऐसे ही उस तरह की औरतें बहुत कम जन्नत में जाएंगी।

6. बेपर्दगी, बेआबरूई और इज़्ज़त को दाग़दार करना है। रसूलुल्लाह स0अ0 ने इरशाद फ़रमाया कि जिस औरत ने अपने पति के घर के अलावा किसी और जगह पर अपने कपड़े उतारे उसने अपने और अल्लाह तआला के बीच मौजूद पर्दे को चाक कर दिया।

7. बेपर्दगी बेहयाई है। औरत को अल्लाह ने सतर (पर्दे के लायक़) बनाया है और सतर को खोलना बेहयाई

और अल्लाह की नाराज़गी को दावत देना है। अल्लाह तआला का इरशाद है: "और जब वह किसी बेहयाई का करती हैं तो कहते हैं कि हमने अपने बाप–दादा को इसी पर पाया है और अल्लाह ने भी हमें इसी का हुक्म दिया है। आप कह दीजिए कि अल्लाह तआला बेहयाई का हुक्म नहीं दिया करता।" शैतान ही है जो बुराई और बेहयाई पर आमादा करता है। "शैतान तुमको ग़रीबी से डराता है और तुमको बेहयाई पर आमादा करता है।"

8. बेपर्दगी इब्लीस का काम है। इब्लीस के साथ जन्नत में पेश आने वाला हज़रत आदम अलै0 का क़िस्सा इस ख़ुदा के दुश्मन के दिल में छिपा हुआ है। बेहयाई और बेपर्दगी की आख़िरी दर्जे में पायी जाने वाली हिंस्र और शदीद ख़्वाहिश की तरफ़ इशारा करता है। उसके बैनुस्सुतूर में बेपर्दगी शैतान के बुनियादी मक़सद के तौर पर झलकती है। इसीलिए अल्लाह तआला का इरशाद है: "ऐ आदम के बेटो! ख़बरदार! शैतान तुमको कहीं फितने में डालने न पाए जैसे उसने तुम्हारे बाप को जन्नत से निकलवा दिया उनके लिबास को उतार कर ताकि उनके शर्म के क़ाबिल जगहें उनको दिखाए। मालूम हुआ कि शैतान ही बेहयाई और बेलिबासी का सबसे बड़ा ध्वजवाहक है और औरत को सरेबाज़ार लाकर बेपर्दा करने वाला और मर्द–औरत की बराबरी के नारे लगाने वाला भी वही है।

9. बेपर्दगी यहूदियों की रविश है; उम्मत को औरत की आज़ादी के नाम से झांसा देकर क़ौमो के अख़लाक़ी स्तर को गिराने में यहूदियों का सबसे बड़ा हाथ रहा है। यहूदी इस मैदान के बड़े माहिर हैं। रसूलुल्लाह स0अ0 ने पहले ही ख़बरदार कर दिया था कि देखो! दुनिया से बचते रहना, औरतों के फ़ित्ने से भी ख़बरदार रहना, बनी इस्राईल में सबसे पहला फ़ित्ना औरतों से मुताल्लिक़ था।

10. बेपर्दगी जाहिलियत की घिनावनी शक्ल है। अल्लाह तआला का इरशाद है: "और अपने घरों में सुकून से बैठी रहना और पुरानी जाहिलियत की तरह बन संवर करके बेपर्दा मत निकलना।" रसूलुल्लाह स0अ0 ने भी जाहिलियत के दावे को ख़बीस और घिनावना क़रार दिया है! जहिलियत का दावा और जाहिलियत वाली बेपर्दगी दोनों का बड़ा गहरा संबंध है। आप स0अ0 ने फ़रमाया है कि जाहिलियत से संबंध रखने वाली हर चीज़ मेरे पैरों के नीचे है! चाहे उसका संबंध जाहिलियत के किसी दावे से हो या फिर जाहिलियत की

11. बेपर्दगी पस्ती और पतन है। एक इन्सान कभी बेपर्दा नहीं होना चाहता। बेपर्दगी इन्सान की फ़ितरत नहीं। बल्कि जानवरों ओर दरिन्दों की फ़ितरत है। इन्सान अगर बेपर्दगी अपनाता है तो अल्लाह तआला ने उसे जो ज़ीनत अता फ़रमायी है उसे वो उतारता फेकता है और जिस इन्सानियत के लिबास से उसकी इज़्ज़त अफ़ज़ाई फ़रमायी गयी उसे कम अक़्ल होने की वजह से मुनासिब न समझकर नोच डालता है और अपने लिए उससे कम स्तर की चीज़ को चुनता है। अतः बेपर्दगी इन्सानी फ़ितरत के बिगड़ जाने की गवाही है। ग़ैरत के एहसास के न रह जाने और ज़मीर के मुर्दा हो जाने की पहचान है, अकबर मरहूम क्या ख़ूब कह गए:

बेपर्दा कल जो नज़र आयीं चन्द बीबियां।
अकबर ज़मी में ग़ैरते क़ौमी से गड़ गया।।

बेपर्दगी बुराई का कभी न ख़त्म होने वाला सिलसिला है। निगाह–ए–शरीअत और तारीख़ की इबरत की निगाह दोनों यक़ीन के साथ बताती हैं कि बेपर्दगी के जलवे में क्या कुछ अंधकार है। बुराई का एक न ख़त्म होने वाला सिलसिला, शर व फ़साद का कभी न बन्द होने वाला दरवाज़ा, जो एक बार खुल गया तो फिर उसके बन्द होने की कभी उम्मीद नहीं की जा सकती और ये बांध अगर टूट गया तो अपने साथ सब कुछ बहा कर ले जाता है। फिर एक लाश रह जाती है अख़लाक़ की रूह से ख़ाली, इन्सानियत के एहसास से ख़ाली, जिसको बस हर उस मांग को पूरा करने की धुन होती है जो उसके तन बदन में उबलता है। जिसको बस अपनी भूख मिटाने की फ़िक्र होती है और यही फिक्र उसकी नीदों को हराम कर देती है और उसके सुकून को ग़ारत कर देती है और उसके दिल को बस इच्छाओं की भट्टी बना डालती है। फिर न ख़ुदा मिलता है न विसाले सनम ही होता है। दुनिया भी जाती है और आख़िरत भी तबाह होती है।

जन्नती हाजी

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

हदीस: हज़रत अबूहुरैरह रज़ि0 से रिवायत है कि रसूलुल्लाह स0अ0 ने इरशाद फ़रमायाः एक उमरा करना दूसरे उमरे तक के समय के लिए कफ़्फ़ारा होता है। और हज्ज–ए–मबरूर (स्वीकृत हज) का बदला सिवाए जन्नत के कुछ नहीं।

फ़ायदा: हज इस्लाम का बुनियादी काम है। इश्क़ व मुहब्बत की सुलगती हुई चिन्गारी को हवा देने का साधन, दिल के सुकून का सामान, मानव जीवन को नयी ज़िन्दगी देने का असरदार नुस्ख़ा, बन्दे के अपने रब से क़रीब होने का आसान तरीक़ा, इब्राहीम (अलै0) की अदाओं को दोहराने का नाम है।

हज हर साहब–ए–हैसियत (जिसके पास वहां का सफ़र करने का साधन हो) पर ज़िन्दगी में एक बार फ़र्ज़ है। जिसकी हिकमत यही है कि इन्सान इब्राहीमी अदाओं पर चलने वाला बन सके जिनको तय करके अल्लाह से क़रीब होना आसान होता है। हज बज़ाहिर कुछ कार्यों पर आधारित एक फ़र्ज़ का नाम है और सुन्नते इब्राहीमी को ताज़ा करना है। लेकिन इसका एक–एक पहलू अर्थपूर्ण है, आत्मिकता की प्रोन्नति का साधन, अल्लाह की पहचान करने के मन्ज़िलें तय करने का ज़ीना है। तलबिया, तवाफ़, सफ़ा व मरवा की सई, अरफ़ात के मैदान में वकूफ़, कुर्बानी, ख़ल्क़ वग़ैरह यह वे आमाल है जिससे बन्दे की उसके रब से ग़ैर मामूली मुहब्बत का अन्दाज़ा होता है।

अल्लाह तआला ने इन्सान की फ़ितरत में यह रखा है कि वह किसी के सामने अपना सर झुकाए, अपनी मुहब्बत का इज़हार करे, दिली सुकून हासिल करे, इसीलिए जिन कामों को करने का बन्दों को हुक्म हुआ है उन सबका संबंध मनुष्य की प्रकृति के अनुसार है। क्योंकि मनुष्य की प्रकृति में यह बात शामिल थी कि वह अपनी आंखो से किसी चीज़ को देख कर सुकून हासिल कर सके। तो इसका इन्तिज़ाम अल्लाह तआला ने कुछ कामों को करने के द्वारा पूरा किया।

सोचने की बात है कि जिस ज़ात ने इन्सानी ज़िन्दगी में पेश आने वाली हर ज़रूरत का हल रखा। उसके उसूल व एहकाम को अपने नबी के ज़रिए तफ़सील के साथ बयान फ़रमाया। उस पर होने वाले अज्र व सवाब को साफ़ कर दिया। उसके बाद भी कितने लोग ऐसे है कि इस्लाम के चमकते दमकते रास्ते पर चलने में ग़च्चा खा रहे हैं। एक बड़ी तादाद उन लोगो की भी पायी जाती है जिनको हज का मुबारक मौक़ा नसीब होता है, मगर वहां जाने के बाद भी वे अपने ज़िन्दगी के मामूलात को नहीं बदलते। हद तो यह है कि हज जैसी मुक़द्दस इबादत को भी अपनी ख़राब नियतों के ज़रिए अकारत कर लेते हैं। मानो आप स0अ0 की वो पेशीनगोई बिल्कुल सच्ची साबित होती हो जिसमें आप स0अ0 ने इरशाद फ़रमाया था कि "एक ज़माना ऐसा आएगा कि जिसमें मालदार सैर व तफ़रीह के लिए, दरमियानी तबके के लोग तिजारत के लिए, फ़क़ीर भीख मांगने के लिए, पढ़े–लिखे लोग नाम के लिए हज करेंगे।

आज दुनिया भर से हज़ारों लाखों की तादाद में लोग हज करने जाते हैं। मगर हज से वापिस आने के बाद उनके जीवन में सिवाए उनके नाम से पहले हाजी लग जाने के कोई बदलाव नही आता। न तक़्वा वाला मिज़ाज होता है। न फ़राएज़ का एहतिमाम, न सुन्नतों की पाबन्दी, न बन्दों के हक़ का लिहाज़ जिसका आम कारण यह है कि मक़सद न हज के पहले ध्यान में होता है न बाद में।

ऊपर की गयी तशरीह से अच्छे से समझा जा सकता है कि हदीस शरीफ़ में जिस हज का बदला जन्नत बताया गया है उनसे वही नसीब वाले लोग मुराद हैं जो अल्लाह की मुहब्बत से भरे अपने दिल की सर्द अंगीठी को गर्माने के लिए सही नियत के साथ, तथाकथित दुनियावी फ़ायदे को ध्यान में रखे बग़ैर, अपनी बन्दगी का इज़हार करते हुए अपने पालनहार के घर हाज़िर होते हैं और उससे मग़फ़िरत मांगते हैं, जैसा कि एक हदीस से भी मालूम होता है कि आप स0अ0 ने फ़रमायाः "जिसने हज किया और ग़लत कामों और गुनाहों को नहीं किया, वह इस हाल में हज से वापिस होगा जैसा कि उसकी मां ने उसको जना हो।"

क़ुर्बानी का उद्देश्य

मुहम्मद अमीन हसनी नदवी

क़ुर्बानी का शब्द जब बोला जाता है तो आम तौर पर ज़हन में यह बात आती है कि क़ुर्बानी से मुराद बक़राईद में जानवरों को ज़िबह करना, क्योंकि हज़रत इब्राहीम अलै0 ने हज़रत इस्माईल अलै0 को अल्लाह के हुक्म से ज़िबह किया था लेकिन अल्लाह तआला ने अपने फ़ज़ल व करम से उनकी जगह पर एक दुम्बे को क़ुर्बानी के तौर पर क़ुबूल फ़रमा लिया और हज़रत इस्माईल अलै0 महफ़ूज़ रहे। यह एक सोच है और लगभग हर आदमी की सोच बस इसी हद तक आकर रुक जाती है। क़ुर्बानी के मक़सद, उसकी हक़ीक़त से इसका कोई लेना–देना नहीं।

क़ुबानी एक ऐसा पवित्र कार्य है कि एक तौहीद परस्त बन्दे ने जो अल्लाह का पैग़म्बर था। जिसकी पूरी ज़िन्दगी क़ुर्बानियों से भरी थी। जिसने ख़ुद अपने आप की क़ुर्बानी दी, अपने बाप की क़ुर्बानी दी, रिश्ते दारों से नाता तोड़ा, घर बार छोड़ा और पूरी दुनिया से संबंध तोड़ लिया और अपने को अल्लाह के दीन के लिए ख़ालिस कर लिया। हज़रत इब्राहीम अलै0 से यह क़ुर्बानिया क्यों ली गयीं। इस बारे में किसी ने ग़ौर किया। इस बारे में किसी को कोई ख्याल आया? ज़रा सोचिए! अल्लाह तआला अपने सबसे ख़ास बन्दे, अपने चहीते पैग़म्बर जिसकी नस्ल में अम्बिया का एक सिलसिला था। कितना वे अल्लाह के लाडले होंगे कि अल्लाह तआला नबूवत को उनके लिए मुक़द्दर फ़रमा रहा है और सिर्फ़ एक क़ुर्बानी नहीं ली गयी बल्कि बहुत सी क़ुर्बानियों से गुज़ारा गया। यह सब क्यों हुआ? बेटे से बढ़कर बाप के लिए और क्या हो सकता है? कभी कभी यह मौक़ा आता है कि बाप को ख़ुद अपने से ज़्यादा अपने बेटे से मुहब्बत होती है। और यही वो वक़्त था जब हज़रत इब्राहीम से क़ुर्बानी को कहा गया। ख़ूब दुआओं के बाद बुढ़ापे मे औलाद होती है उस वक़्त जब सबसे नाता टूट चुका है न मां बाप साथ हैं, न और रिश्तेदार और दोस्त व अहबाब। इस वक़्त सिर्फ़ एक बीबी, एक कमसिन बच्चा। वाक़ई अल्लाह तआला की शाने करीमी देखिए। किस तरह वो अपने बन्दो को आज़माना चाहता है। ज़रा सा हम इस इब्राहीमी माहौल में जाएं और क़ुरआन करीम की आयात और हदीस मुबारका की रोशनी में ये ख़्याल करें कि इस वक़्त का मन्ज़र हमारे सामने है, अल्लाह तआला इरशाद फ़रमाता है: "इब्राहीम अलै0 ने दुआ की ऐ मेरे रब, मुझे नेक औलाद अता फ़रमा तो हमने उनको एक बुर्गबार बच्चे की ख़ुश ख़बरी दी फिर जब वो उनके साथ दौड़ने भागने के क़ाबिल हुआ तो उन्होंने कहा कि ऐ मेरे बेटे मैं ख़्वाब देखता हूं कि मैं तुझे ज़िबह करता हूं, तुम सोच कर बताओ कि तुम्हारी क्या राय है। वो बोला अब्बा जान आपको जो हुक्म हुआ है उसे कर गुज़रिये अल्लाह चाहेगा तो आप मुझे सब्र करने वालों में ही पायेंगे। फिर जब उन दोनों ने सर अल्लाह के सामने झुका दिया और इब्राहीम ने उनको पेशानी के बल लिटा दिया और हमने उन्हें आवाज़ दी कि ऐ इब्राहीम, तुमने ख़्वाब को सच कर दिखाया, यक़ीनन हम अच्छा काम करने वालों को ऐसे ही बदला देते हैं। यक़ीनन यह एक खुला हुआ इम्तिहान था। और हमने एक ज़बरदस्त क़ुर्बानी को उसका फ़िदिया बना दिया।"

अब ज़रा सा उन आयात पर ग़ौर करें और आजकल की क़ुर्बानी को इस पर मुन्तबिक़ करें कि अल्लाह तआला को सिर्फ़ जानवर की क़ुर्बानी कराना मक़सूद था? नहीं! अल्लाह तआला हर एतबार से और हर चीज़ में क़ुर्बानी चाहता है। क़ुर्बानी अगर माल की देनी पड़े, क़ुर्बानी अगर घरबार की देनी पड़े, क़ुर्बानी अगर अपनी जान की देनी पड़े अगर अल्लाह की ख़ातिर मां बाप को छोड़ना पड़े अगर अल्लाह के लिए पसंदीदा से पसंदीदा चीज़ छोड़ना पड़े, तो उसके लिए हर वक़्त इन्सान तैयार रहे। क्योंकि यह मोमिन की पूरी ज़िन्दगी सरापा आज़माइश और हम समय क़ुर्बानी से सुसज्जित है और इसमें उस वक़्त तक उसको कामयाबी मिलेगी जब तक क़ल्ब ख़ुदा की मुहब्बत से भरा हुआ होगा।

ईदुल अज़हा
अहकाम और मसाएल

दुनिया की हर क़ौम और हर मज़हब का साल में कोई न कोई त्योहार ज़रूर होता है। इन्सानी फ़ितरत इसका तक़ाज़ा भी करती है कि साल में ख़ुशियों के इज़हार का भी कोई दिन होना चाहिये। इसीलिये दीन–ए–फ़ितरत इस्लाम में भी इन्सानी फ़ितरत की रिआयत रखी गयी है और साल में दो दिन ख़ुशियां मनाने के भी मुक़र्रर किये गये हैं। अबूदाऊद में हज़रत अनस बिन मालिक रह0 की रिवायत है कि नबी करीम स0अ0 मदीना तश्रीफ़ लाये तो मदीना वालों को देखा कि उन्होंने साल में खुशियां मनाने के दो दिन मुक़र्रर कर रखे हैंः आप स0अ0 ने पूछाः "ये कैसे दो दिन हैं?" सहाबा किराम रज़ि0 ने अर्ज़ कियाः जाहिलियत के ज़माने में हम उन दोनों में खेल–कूद किया करते थे, आंहज़रत स0अ0 ने फ़रमायाः "अल्लाह ने उन दिनों के बदले में उनसे बेहतर दो दिन तुमको इनायत फ़रमाये हैं, ईदुल अज़हा और ईदुल फ़ित्र।"

इनमें से ईदुलफ़ित्र रमज़ानुल मुबारक के बाद मनायी जाती है, जब अल्लाह के हुक्म से अल्लाह के बन्दे पूरे एक महीने तक ख़ास वक़्त में खाने–पीने और नफ़्सानी ख़्वाहिश से परहेज़ करते हैं। दूसरी ईद यानि ईदुल अज़हा ज़िल्हिज्जा की दस तारीख़ को मनायी जाती है। यही हज का ज़माना भी होता है। हज और कुर्बानी के लगभग मनासिक और काम हज़रत इब्राहीम, हज़रत हाजरा और हज़रत इस्माईल अलै0 की अलग–अलग कुर्बानियों और कामों की याद में मनाये जाते हैं। लेकिन दोनों ईदों में समान चीज़ ये है कि इसमे दूसरी क़ौमों के त्योहारों की तरह कोई शोर व गुल बिल्कुल नहीं है। दोनों में जो काम बताये गये हैं, उनमें इस्लाम की सादगी की झलक मिलती है। इन ख़ुशी के मौक़ो पर भी बन्दे अल्लाह की बड़ाई का नारा लगाते हुए बस्ती के बाहर ईदगाह या किसी मस्जिद में जाते हैं और अल्लाह के सामने दो रकआत नमाज़ अदा करके अपनी बन्दगी का इज़हार करते हैं। मानों ईद की नमाज़ मुसलमानों की ख़ुशी मनाने का नमूना हैं। मुसलमानों से मांग यही है कि ख़ुश के मौक़े पर भी अल्लाह के सामने सर झुका दें और उसके हुक्मों के सामने भी सर झुका दें। ईदुल अज़हा के मौक़े पर ईद की नमाज़ के अलावा ज़िल्हिज्जा के शुरू के दस दिन की अहमियत व फ़ज़ीलत भी अलग से बयान की गयी हैं। इसीलिये बुख़ारी में हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि0 की रिवायत है कि नबी करीम स0अ0 ने फ़रमायाः "इन दस दिनों से बेहतर दूसरे कोई भी ऐसे दस दिन नहीं है जिनमें अल्लाह को नेक अमल ज़्यादा महबूब हों।सहाबा ने पूछाः अल्लाह के रास्ते में जिहाद भी नहीं?आप स0अ0 ने फ़रमाया, अल्लाह के रास्ते में जिहाद भी नहीं सिवाये उस शख़्स के जो अपनी जान व माल के साथ निकला हो और उसमें से कोई चीज़ भी वापस न लाया हो। और तिरमिज़ी और इब्ने माजा की रिवायत में है कि आंहज़रत स0अ0 ने फ़रमायाः अल्लाह तआला की इबादत ज़िल्हिज्जा के दस दिनों से बेहतर और कोई ज़माना नहीं है, उनमें एक दिन का रोज़ा एक साल के रोज़ों के बराबर और एक रात में इबादत करना शब क़दर में इबादत करने के बराबर है।"

कुरआन मजीद में अल्लाह तआला ने सूरह फ़ज्र में जिन दस रातों की क़सम खाई है मुफ़स्सिरीन फ़रमाते हैं, इन दस रातों से ज़िल्हिज्जा के पहले अशरे की रातें ही मुराद हैं। इनमें ख़ास तौर पर ज़िल्हिज्जा की 9/तारीख़ की बड़ी फ़ज़ीलत वारिद हुई है। मुस्लिम शरीफ़ में हज़रत अबू क़तादा रज़ि0 की तवील हदीस में है किः "अरफ़ा का रोज़ा रखने पर मेरा अल्लाह पर गुमान ये है कि उसे पिछले एक साल और आगे के एक साल के गुनाहों का कफ़्फ़ारा बना देगा।" लेकिन अरफ़ा के रोज़ों की ये फ़ज़ीलत ग़ैर हाजियों के लिये है। हाजियों को इस रोज़े से मना कर दिया गया है ताकि अरफ़ात के मैदान के काम अच्छी तरह अन्जाम दे सकें। इसीलिये अबूदाऊद में अबूहुरैरा रज़ि0 की रिवायत आयी है कि आंहज़रत स0अ0 मक़ामे अरफ़ात में अरफ़ा का रोज़ा रखने से मना कर दिया है।

कुर्बानी

ज़िल्हिज्जा के महीने में सबसे अहम इबादत कुर्बानी है। इसीलिये हज़रत आयशा रज़ि0 फ़रमाती हैंः नबी करीम स0अ0 ने इरशाद फ़रमायाः "आदम की औलाद नहर के दिन जो अमल करता है उनमें अल्लाह को सबसे ज़्यादा महबूब ख़ून बहाना (कुर्बानी करना) है। वो जानवर

क़यामत के दिन अपनी सींगों, बाल और खुरों के साथ आयेगा और ख़ून ज़मीन पर गिरने से पहले ही अल्लाह के यहां मक़बूलियत हासिल कर लेता है, लिहाज़ा उसको खुशदिली से किया करो।" (तिरमिज़ी, इब्ने माजा) साहिबे निसाब पर कुर्बानी करना अहनाफ़ के नज़दीक वाजिब है, इसलिये कि हदीस में नबी करीम स0अ0 का इरशाद नक़ल किया गया है कि: "जिसके पास वुसअत हो और कुर्बानी न करे वो हमारी ईदगाह के पास न आये।"

कुर्बानी का निसाब

कुर्बानी हर अक़्ल वाले बालिग़, मुक़ीम मुसलमान पर वाजिब होती है। शर्त ये है कि वो साढ़े बावन तोला (612 ग्राम) चांदी या उसकी क़ीमत का मालिक हो। और ये कि उसकी ज़रूरी ज़रूरतों से ज़्यादा हो, या व्यापारिक माल की शक्ल में हो या आवश्यकता से अधिक घरेलू सामान या रहने के मकान से ज़्यादा मकान हो। कुर्बानी और ज़कात के निसाब में एक फ़र्क़ ये भी है कि ज़कात में साल गुज़रने की शर्त होती है, लेकिन कुर्बानी में साल गुज़रने की शर्त नहीं है। इस ज़माने में निसाब का मालिक है तो कुर्बानी वाजिब होगी।

कुर्बानी के दिन

कुर्बानी के तीन दिन हैं। 10, 11 और 12 ज़िलहिज्जा। इनमें से अफ़ज़ल पहले दिल कुर्बानी करना है। अलबत्ता जहां ईद की नमाज़ जायज़ होती है वहां ईद की नमाज़ से पहले कुर्बानी करना जायज़ नहीं है। इसलिये बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत जन्दब की रिवायत है फ़रमाते हैं: नबी करीम स0अ0 ने नहर के दिन नमाज़ पढ़ाई, फिर खुत्बा दिया, फिर कुर्बानी की और इरशाद फ़रमाया: जिसने नमाज़ पढ़ने से पहले कुर्बानी की थी वो इसकी जगह दूसरी कुर्बानी करे और जिसने कुर्बानी नहीं की थी वो अल्लाह का नाम लेकर कुर्बानी करे।

कुर्बानी के जानवर

कुर्बानी सिर्फ़ ऊंट, गाय, भैंस, बकरी, दुम्बा, भेड़ (नर–मादा दोनों) की जायज़ है। बक़िया जानवरों की जायज़ नहीं है। इसमें भी हदीस शरीफ़ में ये शर्त लगायी गयी कि मुसन्ना हो और ऐबों से ख़ाली हो। इसीलिये मुस्लिम शरीफ़ में हज़रत जाबिर रज़ि0 की रिवायत है कि नबी करीम स0अ0 ने फ़रमाया: "सिर्फ़ मुसन्ना की कुर्बानी किया करो यहां तक कि तुम पर तंगी हो तो भेड़, दुम्बा का छः माह का या उससे ज़्यादा का जानवर ज़िबह कर लिया करो।"

इन जानवरों में से हर एक का मुसन्ना अलग–अलग होता है। इसीलिये ऊंट का मुसन्ना वो है जो पांच साल पूरे कर चुका हो। गाय और भैंस का मुसन्ना वो है जो दो साल पूरे कर चुका हो, और बकरी और भेड़ और दुम्बा का मुसन्ना वो है जो एक साल पूरे कर चुका हो। लेकिन जैसा कि हदीस में गुज़रा है, दुम्बा अगर छः माह या उससे ज़्यादा का हो तो उसकी कुर्बानी की जा सकती है।

भेड़, बकरी की कुर्बानी सिर्फ़ एक व्यक्ति की तरफ़ से हो सकती है जबकि ऊंट व गाय इत्यादि में सात लोग शामिल हो सकते हैं, लेकिन शर्त ये है कि किसी का हिस्सा सातवें हिस्से से कम न हो और सबकी नियत कुरबत की हो।

ऐबों की तफ़्सील

आंहज़रत स0अ0 ऐबों से पाक और उम्दा जानवरों की कुर्बानी फ़रमाया करते थे और उम्मत को भी ऐबों से पाक, उम्दा जानवरों की कुर्बानी की ताकीद फ़रमाया करते थे। हज़रत अली रज़ि0 से रिवायत है कि आंहज़रत स0अ0 ने हमको हुक्म दिया कि जानवर की आंख कान का जायज़ा लें और कान कटे–फटे और कान मे सूराख़ वाले जानवरों की कुर्बानी न किया करें। (अबूदाऊद, नसाई, इब्ने माजा)

अबूदाऊद, नसई और इब्ने माजा ही में हज़रत बरा बिन आज़िब रज़ि0 की रिवायत है कि नबी करीम स0अ0 से सवाल किया गया: किन जानवरों की कुर्बानी से बचा जाये?आप स0अ0 ने हाथ के इशारे से फ़रमाया: चार से! वो लंगड़ा जानवर जिसका लंगड़ापन ज़ाहिर हो, वो काना जिसका कानापन ज़ाहिर हो, ऐसा बीमार जानवर जिसकी बीमारी ज़ाहिर हो, और वो लाग़र ज़िसकी हड्डियों में गूदा ही न हो।

इन जैसी हदीसों से फ़ुक़्हा ने ऐबों के बारे में निम्नलिखित तफ़्सीलें बयान की हैं:

1– अंधे, काने और लंगड़े जानवर की कुर्बानी जायज़ नहीं है। उसी तरह उस बीमार और लाग़र जानवर की कुर्बानी भी ठीक नहीं जो अपने पैरों पर कुर्बानी की जगह तक न जा पाये।

2– जिस जानवर की दुम तिहाई से ज़्यादा कटी हो

उसकी कुर्बानी भी नाजायज़ है।

3– जिस जानवर के दांत बिल्कुल न हों या अक्सर न हों उसकी कुर्बानी भी नाजायज़ है। यही हुक्म उस जानवर का भी है जिसके कान पैदाइशी तौर पर न हों।

4– जिस जानवर की सींग पैदाइशी तौर पर न हों, या बीच से टूट गये हों, उसकी कुर्बानी जायज़ है, लेकिन अगर सींग जड़ से उख़ड गयी हो तो असर दिमाग़ तक पहुंच जाता हैं।

5– ख़स्सी (बधिया) की कुर्बानी न केवल जायज़ बल्कि अफ़ज़ल और सुन्नत है। आंहज़रत स0अ0 से ख़स्सी की कुर्बानी करना साबित है।

कुर्बानी का तरीक़ा

अपनी कुर्बानी अपने हाथ से करना अफ़ज़ल है। लेकिन अगर कुर्बानी करना नहीं जानता या किसी और वजह से ख़ुद भी नहीं करना चाहता तो कम से कम ज़िबह के वक़्त हाज़िर रहने की फ़ज़ीलत ज़रूर हासिल करे, बहुत से लोग इस वजह से मौजूद भी नहीं रहना चाहते, ये रूझान सही नहीं है।

कुर्बानी के वक़्त जो दुआंए मनकूल हैं, उनका पढ़ना अफ़ज़ल है, ज़रूरी नहीं है। सिर्फ़ ज़िबह के वक़्त बिस्मिलिल्लाह अल्लाहुअकबर कहना ज़रूरी है। कुर्बानी करते वक़्त नीचे दिये गये कामों का ख़्याल रखना चाहियेः

1– ज़िबह करने से पहले जानवरों को चारा खिला दिया जाये। भूखा–प्यासा रखना मकरूह है।

2– ज़िबह की जगह सहूलत से ले जाये, घसीट कर ले जाना मकरूह है।

3– क़िब्ला रुख़ बायें करवट लिटांए, उससे जान आसानी से निकलती है।

4– छुरी तेज़ रखे, कुन्द छुरी से ज़िबह करना मकरूह है।

5– छुरी जानवर को लिटाने से पहले तेज़ कर ले और उससे छिपाकर तेज़ करे।

6– एक जानवर के सामने दूसरे जानवर को ज़िबह न करे।

7– ज़िबह के बाद जानवर के ठन्डे होने से पहले न सर अलग करे न खाल निकाले।

8– सुन्नत ये है कि जब जानवर ज़िबह करने के लिये क़िब्ला की तरफ़ लिटांए तो ये दुआ पढ़ेः

﴿إِنِّي وَجَّهْتُ وَجْهِيَ لِلَّذِي فَطَرَ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضَ حَنِيفًا وَمَا أَنَا مِنَ الْمُشْرِكِينَ ☆ قُلْ إِنَّ صَلَاتِي وَنُسُكِي وَمَحْيَايَ وَمَمَاتِي لِلَّهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ لَا شَرِيكَ لَهُ وَبِذَلِكَ أُمِرْتُ وَأَنَا أَوَّلُ الْمُسْلِمِينَ﴾ اللّٰهم منك ولك"

بسم الله الله اكبر

और ज़िबह करने के बाद ये दुआ पढ़ेः

"اللهم تقبله مني كما تقبلت من حبيبك محمدٍ وخليلك ابراهيم عليهما الصلاة والسلام"

कुर्बानी का गोश्त

अफ़ज़ल ये है कि कुर्बानी के गोश्त के तीन हिस्से कर लें। एक हिस्सा अज़ीज़ व अक़ारिब के लिये, एक फ़क़ीरों के लिये और एक अपने लिये। लेकिन ये सिर्फ़ अफ़ज़ल है। वो पूरा गोश्त भी इस्तेमाल कर सकता है और पूरा हदिया और सदक़े में भी दे सकता है। कुर्बानी को गोश्त ग़ैर मुस्लिमों को भी दिया जा सकता है। खाल अपने इस्तेमाल में ले ये ग़रीबों को दे दे, लेकिन कुर्बानी का गोश्त या खाल बेची तो उसका ग़रीबों पर सदक़ा करना ज़रूरी हो जाता है। वल्लाहु आलम बिस्सवाब

भैंस की कुर्बानी का हुक्म

शरीअत ने कुर्बानी के जानवर तय कर दिये हैं और ये जानवर तीन हैंः

1: ऊंट

2: गाय

3: बकरी

उपरोक्त सभी जानवर अपनी सारी ज़िन्स सहित।

इसीलिये हदीसों में इन्हीं तीन जानवरों का ज़िक्र है।

1. हज़रत उक्बा बिन आमिर रज़ि0 से मरवी है कि नबी करीम स0अ0 ने उनको भेड़ बकरियां इनायत फ़रमायी ताकि कुर्बानी के लिये सहाबा किराम रज़ि0 पर तक़सीम फ़रमा दें। (बुख़ारीः 5555)

2. हज़रत जाबिर रज़ि0 से मरवी है कि नबी करीम स0अ0 ने फ़रमायाः "गाय सात लोगों की तरफ़ से और ऊंट सात लोगों की तरफ़ से काफ़ी है।" (मुस्लिमः 2808)

अस्ल बात ये है कि कुरआन मजीद में कुर्बानी के जानवरों की तरफ़ इशारा करते हुए इन्हीं जानवरों का ज़िक्र है। इसीलिये सूरह हज में हैः "और जितने अहले

शरीअत गुज़रे हैं उनमें से हमने हर उम्मत के लिये इस ग़रज़ से मुक़र्रर किया था वो इन (मख़सूस) चौपायों पर अल्लाह का नाम लें जो उसने उनको अता फ़रमाये थे।" (सूरह हजः 34)

फिर उन ख़ास जानवरों की दूसरी जगह तफ़सील बताते हुए फ़रमायाः

"और ये मवेशी आठ नर व मादा (पैदा किये) यानि भेड़ व दुम्बा में दो क़िस्म नर व मादा और बकरी में दो क़िस्म नर व मादा (आगे है) और ऊँट में दो क़िस्म और गाय (में दो क़िस्म)" (सूरह अलईनाम : 133–135)

इसीलिये उलमा मुत्तफ़िक़ हैं कि केवल उन्हीं जानवरों की कुर्बानी हो सकती है किसी और जानवर की नहीं हो सकती है। साहबे बदाए फ़रमाते हैंः "रही उसकी जिन्स तो वो ये है कि जानवर तीन जिन्सो बकरी, ऊँट या गाय में से हो और हर जिन्स में उसकी नू और उसका नर और मादा और ख़स्सी या सांड सब दाख़िल हैं। इसलिये कि जिन्स का उन सब पर इतलाक़ होता है।"

(बदाए सनाएः 205/4)

और अल्लामा इब्ने रुश्द रह0 फ़रमाते हैंः

"सब इस पर मुत्तफ़िक़ हैं कि मख़सूस जानवरों के अलावा से कुर्बानी जायज़ नहीं है।"

(बदायातुल मुजतहिदः 430/1)

फिर उलमा का इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि ऊंट से मुराद उसकी हर क़िस्म है, चाहे वो बख़्ती ऊँट हो या एराबी, बकरी में भी उसकी सभी क़िस्म भेड़, दुम्बा, शामिल हैं, गाय की भी सभी क़िस्में उसमें शामिल हैं, इसलिये कि हदीसों में उनके जिन्सी नाम लिये गये हैं और जिन्स का इतलाक़ हर क़िस्म पर होता है।

फिर जमहूर के निकट भैंस भी गाय की ही एक क़िस्म हैं, लिहाज़ा उसकी कुर्बानी भी सही है। साहबे बदाए रह0 फ़रमाते हैंः

"बकरी ग़नम की एक क़िस्म है और भैंस गाय की एक क़िस्म है, इस दलील से कि इसको बाब–ए–ज़कात में ग़नम और गाय में मिला दिया जाता है।"

(बदाए सनाएः 205/4)

अल्लामा नववी रह0 फ़रमाते हैंः

"अज़हिया में शरब जवाज़ ये है कि जानवर अनआम में से हो यानि ऊँट, गाय और बकरी इसमें ऊंट की सभी क़िस्में बख़ाती हैं और अराब और गाय की सभी क़िस्में यानि भैंस और ख़ालिस अरबी दरबानी और ग़नम की तमाम क़िस्में भेड़–बकरी और सबकी नर व मादा बराबर हैं, (आगे है) इसमें से किसी चीज़ में हमारे यहां कोई इख़्तिलाफ़ नहीं है।" (अलमजमूअः 222/8)

मालूम हुआ कि उलमा भी इस पर क़रीब–क़रीब एक मत हैं कि भैंस गाय ही की एक जिन्स से है। किसी आयत या हदीस में ये नहीं आया है कि भैस गाय की जिन्स से है, कुरआन और हदीस में सिर्फ़ ये आया है कि गाय की जिन्स भी कुर्बानी के जानवरों में से है। फिर जमहूर इस पर मुत्तफ़िक़ हैं कि भैंस गाय की जिन्स से है, इसके लिये कुछ हवाले दिये जा रहे हैं।

1– अल्लामा इब्ने तैमिया रह0 फ़रमाते हैंः

"भैंस गाय के मर्तबे में से है, इब्नुल मुन्ज़िर ने उसके मुतालिक इजमा नक़ल किया है।

(फ़तावा इब्ने तैमियाः 37/25)

2– अल्लामा इब्ने क़द्दामा रह0 फ़रमाते हैंः

भैस गायों के हुक्म में होंगी, इसमें हमें किसी के इख़्तिलाफ़ की जानकारी नहीं और इब्नुल मुन्ज़िर रह0 फ़रमाते हैंः अहले क़लम में से जिसकी बातें याद रखी जाती हैं, उनमें से हर एक का इस पर इत्तिफ़ाक़ है और भैंस गाय की क़िस्म में से हैं, जैसा कि बख़ाती ऊंट की किस्म में से है। (अलमुग्नी : 470/2)

3– लुग़ात में भैंस को गाय की जिन्स क़रार दिया गया है।

उलमा के इत्तिफ़ाक़ और जानवरों के माहिरों के कथनों को देखकर जमहूर भैंस की कुर्बानी के जवाज़ के क़ायल हैं। ये अलग बात है कि जिन इस्लामी देशों में सहूलत के साथ गाय की कुर्बानी हो सकती है वहां एहतियातन गाय ही की कुर्बानी होती है। भारत की विशेष स्थिति के कारण गाय की कुर्बानी मुश्किल काम है अतः भैंस की कुर्बानी से मुताल्लिक़ जमहूर के क़ौल से फ़ायदा उठाया जा रहा है, किसी को इत्मिनान न होतो वो उसकी कुर्बानी न करे लेकिन जमहूर के क़ौल के बावजूद इस मौजू पर बहस करना, मैं समझता हूं कि अक़्लमन्दी की बात नहीं कही जा सकती है।

सात चीज़ों के आने से पहले नेक काम कर लो

मुफ्ती मुहम्मद तक़ी उस्मानी

हदीस: हज़रत अबूहुरैरा रज़ि0 से रिवायत है कि रसूलुल्लाह स0अ0 ने फ़रमायाः सात चीज़ों के आने के पहले जल्द से जल्द अच्छे काम कर लो। क्या तुम (नेक काम करने के लिए) ऐसे फ़ाक़े का इन्तिज़ार कर रहे हो जो भुला देने वाला हो? या तुम ऐसी मालदारी का इन्तिज़ार कर रहे जो इन्सान को सरकश बना दे? या ऐसी बीमारी का इन्तिज़ार कर रहे हो जो तुम्हारी सेहत को ख़राब कर दे? या तुम सठिया देने वाले बुढ़ापे का इन्तिज़ार कर रहे हो? या तुम उस मौत का इन्तिज़ार कर रहे हो, जो अचानक आ जाए? या तुम दज्जाल का इन्तिज़ार कर रहे हो, दज्जाल तो बदतरीन चीज़ है जिसका इन्तिज़ार किया जाए या फिर क़यामत का इन्तिज़ार कर रहे हो? क़यामत तो बड़ी आफ़त और सख़्त है।

व्याख्या: यह रिवायत हज़रत अबूहुरैरा रज़ि0 से ली गयी है। इसमें "नेक कामों" की ओर बढ़ने की जल्दी की फ़िक्र करने के बारे में फ़रमाया गया है। इसीलिए फ़रमाते हैं कि नबी करीम स0अ0 ने इरशाद फ़रमायाः सात चीज़ों के आने के पहले जल्द से जल्द अच्छे काम कर लो, जिसके बाद अच्छे काम करने का मौक़ा नहीं मिलेगा और फिर सात चीज़ों को एक दूसरे अन्दाज़ से बयान फ़रमायाः

क्या भुखमरी व फ़ाक़े का इन्तिज़ार है?

क्या तुम नेक काम करने के लिए ऐसे फ़ाक़े का इन्तिज़ार कर रहे हो जो भुला देने वाला हो? जिसका मतलब यह है कि अगर इस वक़्त तुम्हें खुशहाली मिली हुई है, रुपया–पैसा पास है, खाने–पीने की तंगी नहीं है और ज़िन्दगी ऐश व आराम से बीत रही है। इन हालात में अगर तुम नेक काम को टाल रहे हो तो क्या तुम इस बात का इन्तिज़ार कर रहे हो कि जब मौजूदा खुशहाली दूर हो जाएगी और खुदा न करे ग़रीबी आ जाए और फ़ाक़े के नतीजे को भूल जाओगे, क्या उस समय नेक काम करोगे? अगर तुम्हारा ख़्याल यह है कि इस खुशहाली के ज़माने में तो ऐश हैं और मज़े हैं और फिर जब दूसरा वक़्त आएगा, उसमें नेक काम करेंगे, तो उसके जवाब में आप स0अ0 फ़रमा रहे हैं कि जब माली तंगी आ जाएगी तो उस वक़्त नेक कामों से और दूर हो जाने का ख़तरा है। उस वक़्त इन्सान इतना परेशान होता है कि ज़रूरी काम भी भूल जाता है। इससे पहले कि वो वक़्त आए कि तुम्हें माली परेशानी हो जाए, आर्थिक रूप से तंगी का सामना हो, उससे पहले–पहले जो तुम्हें खुशहाली से उपलब्ध हो, उसको ग़नीमत समझकर उसको नेक कामों में ख़र्च करो।

क्या अमीरी का इन्तिज़ार है?

क्या तुम ऐसी अमीरी का इन्तिज़ार कर रहे हो जो इन्सान को सरकश बना देती है?यानि जबकि उस वक़्त बहुत ज़्यादा अमीरी नहीं हो और यह सोच रहे हों कि अभी ज़रा पैसे की परेशानी है या यह कि पैसे की तंगी तो नहीं है कि लेकिन दिल यह चाह रहा है कि और पैसे आ जाएं, और दौलत मिल जाए तब नेक काम करेंगे। याद रखो! अगर अमीरी ज़्यादा होगी और अगर पैसे बहुत ज़्यादा आ गए और दौलत के अम्बार जमा हो गए तो उसके नतीजे में अंदेशा यह है कि कहीं ऐसा न हो कि वो अमीरी तुम्हें और ज़्यादा सरकशी में डाल दे। इसलिए कि इन्सान के पास जब माल ज़्यादा हो जाता है और ऐश व आराम ज़्यादा हो जाता है तो वो खुदा को भुला बैठता है, लिहाज़ा जो कुछ करना है अभी कर लो।

क्या बीमारी का इन्तिज़ार है?

क्या ऐसी बीमारी का इन्तिज़ार कर रहे हो जो तुम्हारी सेहत को ख़राब कर दे?यानि इस वक़्त सेहत है तबियत ठीक है, जिस्म में ताक़त मौजूद है। अगर इस

वक़्त कोई काम करना चाहोगे तो आसानी के साथ कर सकोगे। तुम क्या नेक कामों को इसलिए टाल रहे हो कि यह सेहत चली जाएगी और खुदा न करे जब बीमारी आ जाएगी तो नेक काम करोगे। अरे जब सेहत की हालत में नेक काम नहीं कर पाए तो बीमारी की हालत में क्या करोगे?और फिर बीमारी खुदा जाने कैसी आ जाए, किस वक़्त आ जाए, तो इससे पहले कि वह बीमारी आए, नेक काम कर लो।

क्या बुढ़ापे का इन्तिज़ार कर रहे हो?

क्या तुम सठिया देने वाले बुढ़ापे का इन्तिज़ार कर रहे हो? अभी तो हम जवान हैं। अभी तो हमारी उम्र ही क्या है। अभी दुनिया में देखा ही क्या है। इस जवानी के ज़माने को ऐश और लज़्ज़तों के साथ गुज़र जाने दो फिर नेक काम कर लेंगे तो सरकार–ए–दो आलम स0अ0 फ़रमा रहे हैं कि क्या तुम बुढ़ापे का इन्तिज़ार कर रहे हो? हालांकि कभी–कभी बुढ़ापे में इन्सान के हवास ख़राब हो जाते हैं और अगर कोई काम करना भी चाहे तो नहीं कर पाता तो इससे पहले कि बुढ़ापे का दौर आए, इससे पहले इस ज़माने में नेक काम कर लो। बुढ़ापे मे तो यह हालत हो जाती है कि न मुंह में दांत, न पेट में आंत और अब गुनाह करने की ताक़त ही न रही, इस वक़्त अगर गुनाह से बच भी गए तो क्या कमाल कर लिया? जब जवानी हो, ताक़त मौजूद हो, गुनाह करने के सामान मौजूद हो, गुनाह करने की वजह मौजूद हो, गुनाह करने का जज़्बा दिल में मौजूद हो उस वक़्त अगर गुनाहों से बच जाए तो अस्ल में पैग़म्बराना तरीका है।

अरे बुढ़ापे में तो ज़ालिम भेड़िया भी परहेज़गार बन जाता है। वह इसलिए परहेज़गार नहीं बनता कि उसको किसी अख़लाक़ी फ़लसफ़े ने परहेज़गार बना दिया या उसके दिल में खुदा का ख़ौफ़ आ गया बल्कि इसलिए परहेज़गार बन गया कि अब कुछ कर ही नहीं सकता। किसी को चीर–फ़ाड़ कर खा नहीं सकता। अब वह ताक़त ही बाक़ी नहीं रही। इसलिए एक कोने में परहेज़गार बना बैठा है। बल्कि जवानी के अन्दर तौबा करना यह है पैग़म्बरी का तरीक़ा। यह है पैग़म्बरों की पहचान। हज़रत यूसुफ़ अलै0 को देखिए कि भरपूर जवानी है, ताक़त है, क़ूव्वत है, हालात हैं और गुनाह की दावत दी जा रही है लेकिन उस वक़्त ज़बान पर कलिमा आता है: "मैं अल्लाह की पनाह मांगता हूं।" यह है पैग़म्बरी का तरीक़ा कि इन्सान जवानी के अन्दर गुनाहों से तौबा कर ले। जवानी के अन्दर इन्सान नेक काम कर ले। बुढ़ापे में तो और कोई काम नहीं बन पाता। हाथ–पांव चलाने की सकत ही नहीं है, अब गुनाह क्या करेंगे?

क्या मौत का इन्तिज़ार है?

क्या तुम उस मौत का इन्तिज़ार कर रहे हो जो अचानक आ जाए। अभी तो तुम नेक कामों को टाल रहे हो कि कल कर लेंगे, परसों कर लेंगे, कुछ वक़्त गुज़र जाए तो शुरू करेंगे। क्या तुम्हें यह मालूम नहीं कि मौत अचानक भी आ सकती है। कई बार तो मौत पैग़ाम देती है, अल्टीमेटम देती है, लेकिन कई बार बग़ैर अल्टीमेटम के भी आ जाती है और आज की दुनिया में तो हादसों का यह आलम है कि कुछ मालूम नहीं, किसी वक़्त इन्सान के साथ क्या हो जाए, वैसे तो अल्लाह तआला नोटिस भेजते हैं।

क्या दज्जाल का इन्तिज़ार है?

क्या तुम दज्जाल का इन्तिज़ार कर रहे हो और यह सोच रहे हो कि अभी तो ज़माना नेक कामों के लिए साज़गार नहीं है, तो क्या दज्जाल का ज़माना साज़गार होगा?जब दज्जाल आएगा तो क्या उस फित्ने में नेक काम कर सकोगे? खुदा जाने उस वक़्त क्या आलम हो। गुमराही के कैसे–कैसे साधन हों?तो क्या तुम उस वक़्त का इन्तिज़ार कर रहे हो। दज्जाल बदतरीन चीज़ है जिसका इन्तिज़ार किया जाए बल्कि उसके आने से पहले–पहले नेक काम कर लो।

क्या क़यामत का इन्तिज़ार है?

क्या क़यामत का इन्तिज़ार कर रहे हो? तो सुन लो कि क़यामत जब आएगी तो इतनी मुसीबत की चीज़ होगी कि उस मुसीबत का कोई इलाज इन्सान के पास नहीं होगा तो उसके आने से पहले नेक काम कर लो।

सारी हदीसों का खुलासा यह है कि किसी नेक काम को टालो नहीं और आज के नेक काम को कल पर मत छोड़ो, बल्कि जब नेक काम का जज़्बा पैदा हो, उस पर फ़ौरन अमल कर लो। अल्लाह तआला मुझे और आप को इस पर अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए। आमीन

अनमोल वचन

हज़रत ज़ैनुल आबदीन अली इब्न-ए-हुसैन (रह०)

❖ अल्लाह की इबादत सिर्फ़ अल्लाह के शुक्र के जज़्बे (भाव) से हो और अगर नहीं तो या फिर वो गुलामों की इबादत है या जन्नत की चाहत।

❖ गुनहगार, कंजूस, झूठा, बेवकूफ़, बेरहम इन पांच तरह के लोगों की संगत अच्छे इन्सानों के लिये ज़रा भी फ़ायदेमन्द नहीं है।

❖ दोस्त वो नहीं कि तुम अपनी ज़रूरत पर उससे कुछ मांग लो और उसको ख़ुशी भी न हो।

❖ नेकी की ओर मार्गदर्शन और बुराई से रोकने का काम न करने वाला कुरआन मजीद से अपना रिश्ता तोड़ लेने वाला है।

❖ घमन्ड के नशे में भरा हुआ आदमी अगर सोच ले कि मैं एक गन्दी बूँद से पैदा हुआ हूं तो वो कभी भी घमन्ड न करे।

❖ दुनियादारों के लिये सोचने की बात है कि वो केवल एक ख़त्म हो जाने वाली जगह के लिये ही काम करके रह जाते हैं और हमेशा रहने वाले घर को भूल बैठते हैं।

❖ इस्लाम से मुहब्बत बतायी हुई हद तक ही होनी चाहिये वरना वो मुहब्बत दुश्मनी की वजह बन जाती है।

❖ भला आदमी वो है अपने जो अपने आप को ख़ैर के काम करने का पाबन्द बना ले।

❖ अक़्लमन्द आमदी फ़ायदा देने वाली महफ़िलों को तरजीह (वरीयता) देता है।

❖ सही इल्म जहां से मिल सके लेने में कोई हर्ज नहीं।

❖ जिस आदमी की संगत से दीनी फ़ायदा जुड़ा हो उसको छोड़ना नहीं चाहिये।

❖ इबादत गुज़ार वो आदमी है जो हराम की चीज़ों से बचता हो।

❖ मुसलमान की पहचान अच्छे पड़ोसी की संगत अपनाना भी है।

❖ अच्छा इन्सान वो है जो अपने से न जुड़ी हुई बात के पीछे न लगे और अच्छे अख़लाक़ (व्यवहार) वाला हो।

❖ भलाई में वो आदमी है जो अपनी नफ़्स को टटोलता रहता हो और नफ़्स की जाँच करने का पाबन्द हो।

❖ आख़िरत की फ़िक्र से ग़म व ख़ौफ़ में रहने वाला व्यक्ति घाटे में नहीं रहता।

❖ सबसे बुरा शख़्स वो है जो दीन के साथ दुनिया को भी धोखा देता हो।

❖ वह व्यक्ति फ़ायदे में है जो मुसीबत पर सब्र करता हो और हक़ अदा करने का पाबन्द हो और बेकार की चीज़ों से बचता हो।

❖ अल्लाह का प्यारा बन्दा वो है जो गुनाह के बाद तौबा करने को न भूले।

❖ शरीफ़ आदमी वो है जो अल्लाह की दी हुई चीज़ पर अच्छे से सब्र करे।

❖ जो व्यक्ति इल्म (ज्ञान) को छिपाये या उस पर उजरत (मेहनताना) मांगे वह इल्म उसको कभी फ़ायदा नहीं पहुंचा सकता।

❖ छिपा कर सदक़ा करना अल्लाह तआला के गुस्से से दूर रखता है।

❖ अस्ल तक़्वा यह है कि इन्सान अल्लाह तआला का हर घड़ी लिहाज़ रखे।

❖ दुनिया व आख़िरत के एतबार से फ़ायदे में वह व्यक्ति है जो जिहालत की बात से परहेज़ और ज़ुल्म पर सब्र और बुरी बात से दूर रहने की पाबन्दी करे।

❖ सब्र करने वाला वह है जो अपने दिल को अल्लाह की इताअत में लगाये रखे और गुनाहों से दूर रहे।

❖ अल्लाह से क़रीब होने वाला आदमी वह है जो सही नियत के साथ एक दूसरे से मिलता जुलता हो और अल्लाह के लिये आपस में किसी ख़ैर की बात करता हो।

❖ आपस में मिलना जुलना अल्लाह की इताअत के लिये ही होना चाहिये वरना बग़ैर अल्लाह की इताअत के कभी–कभी वह मिलना जुदा होने की वजह बन जाता है।

❖ जो दुनिया को अपने लिये ख़तरा न समझे, वह सबसे बड़े घाटे में है।

अल्लाह की हम्द और उसका शुक्र

ज़बान के लिये ये बड़े गर्व की बात है कि वह हम्द व शुक्र के लफ़्ज़ों से तर रहे। यूँ भी ये बड़ी एहसान फ़रामोशी है कि एहसान व अच्छा सुलूक करने वाले का शुक्र न अदा किया जाये और उसकी तारीफ़ न की जाये। अल्लाह तआला ने हम पर बेशुमार एहसान फ़रमाये हैं और हर वक़्त उसकी नेमतों से हम लोग फ़ायदा उठाते रहते हैं। दाना, पानी, हवा, रोशनी, सेहत व आफ़ियत, अमन व सलामती, और उन जैसी बेशुमार नेमतें हैं जो अल्लाह तआला ने हमको आपको दे रखी हैं। जिनका कोई बदल नहीं है। उनमें से अगर कोई नेमत हमसे छीन ली जाये तो ज़िन्दगी दुश्वार हो जाये। मगर इन्सान की तबियत नाशुक्री और एहसान फ़रामोशी की तरफ़ मायल रहती है। कुरआन शरीफ़ में फ़रमाया गया है:

"और जब हम इन्सान पर ईनाम करते हैं तब वो ऐराज़ करता है और अकड़ता है और जब उसको कोई तकलीफ़ पहुंचती हैं तो वह मायूसी का शिकार हो जाता है।"

कुरआन पाक में हम्द व शुक्र का ज़िक्र

अल्लाह तआला ने अपने सारे बन्दों को एहसान मन्दी और हम्द व शुक्र की तलक़ीन फ़रमायी है। सूरह फ़ातिहा जो नमाज़ की हर रकआत में पढ़ी जाती है और कुरआन शरीफ़ की सबसे पहली सूरह है, उसकी शुरूआत भी हम्द से की गयी है:

"सब तारीफ़ है अल्लाह की जो सारे जहानों का पालने वाला है।"

फिर जगह–जगह अल्लाह ने अपने एहसानों की निशानदेही फ़रमायी है। और हम्द व शुक्र के शब्दों से अपने बन्दों को आगाह किया है। पूरे कुरआन शरीफ़ में अलग–अलग पीराओं से तारीफ़ के अल्फ़ाज़ आयें हैं। कहीं ख़ुद तारीफ़ फ़रमायी है और कहीं उन नेक लोगों का ज़िक्र है जो ख़ुदा की तारीफ़ में ज़बान हर वक़्त तर किये रहते हैं।

हम्द व शुक्र का हुक्म:

अल्लाह तआला अपने बन्दों को आकर्षित करके इरशाद फ़रमाता है:

"पस तुम लोग मुझे याद करो, मैं तुमको याद रखूंगा और मेरा शुक्र करो और नाशुक्री मत करो।" (बक़रा : १८)

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Postal Reg. No.
RBL/NP - 10

ISSUE: 09 SEPTEMBER 2015 VOLUME: 07

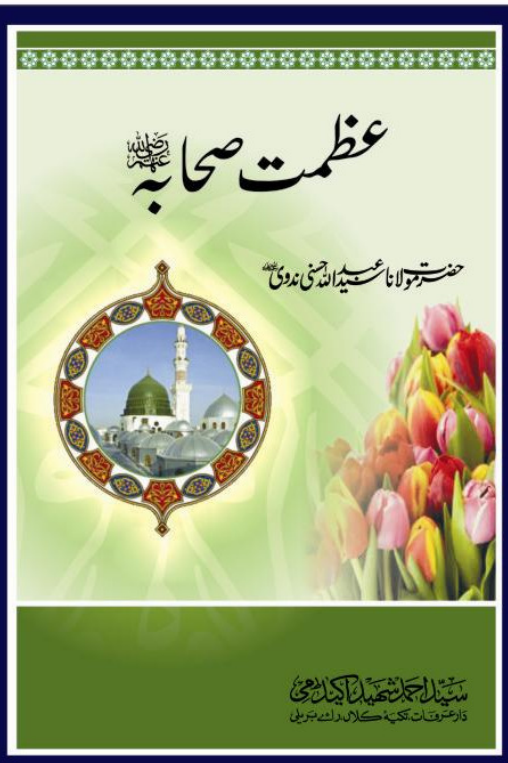

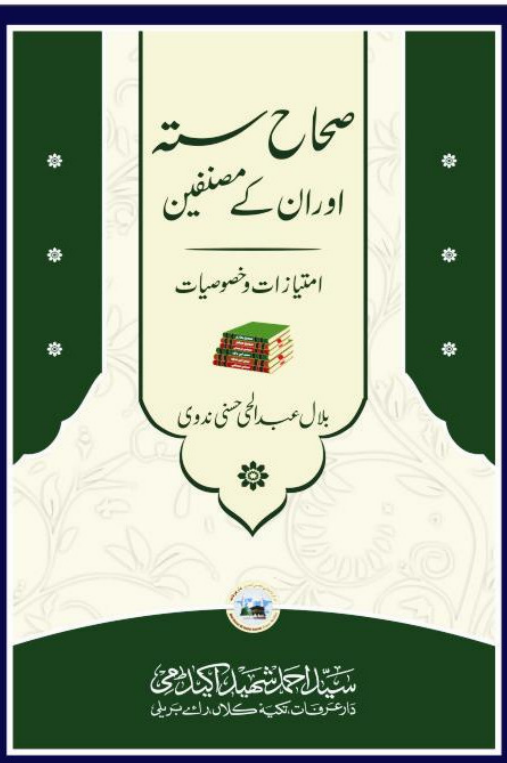

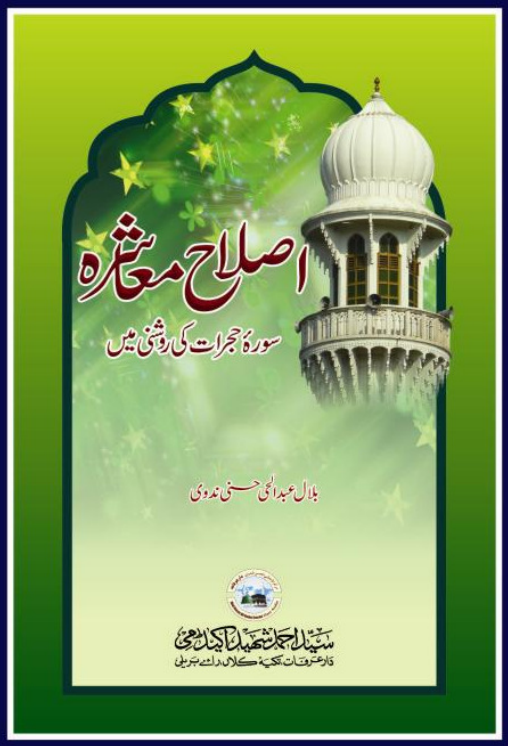

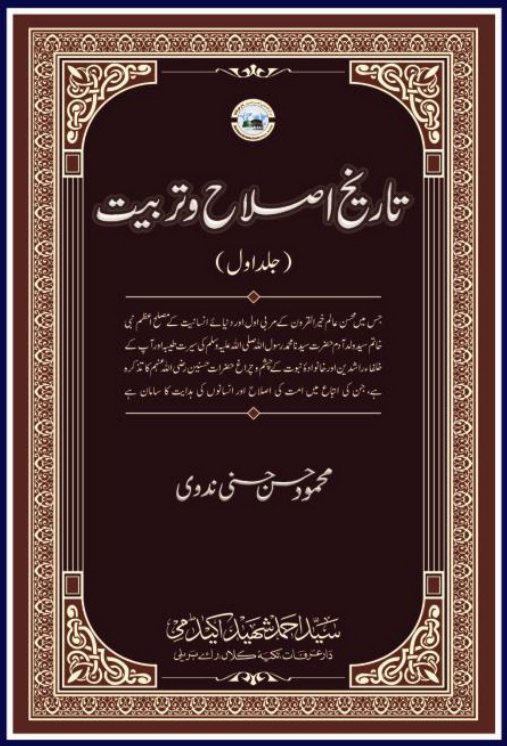

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI
Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9792646858
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.